सुंदरी

भाई साहिब भाई वीर सिंह



सुंदरी

भाई साहिब भाई वीर सिंह

-हिन्दी रूपान्तर-

डा: महीप सिंह

भाई वीर सिंह साहित्य सदन
भाई वीर सिंह मार्ग, नई दिल्ली - 110 001

SUNDRI

Bhai Vir Singh

Translated by Dr. Maheep Singh

हिन्दी में प्रथम संस्करण : — —, 1982

द्वितीय संस्करण : जनवरी, 2001

तृतीय संस्करण : अक्तूबर, 2006

चर्तुथ संस्करण : नवंबर, 2012

प्रकाशक:

भाई वीर सिंह साहित्य सदन,

भाई वीर सिंह मार्ग,

नई दिल्ली

मुद्रक:

Printograph

2966/41, Beadon Pura

Karol Bagh, New Delhi-110005

मूल्य : 35/-

प्रकाशकीय

डॉ० भाई साहिब भाई वीर सिंह जी की इस रचना को हिन्दी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए हमें अति प्रसन्नता हो रही है। इस रचना का सर्वप्रथम प्रकाशन सन् 1898 में पंजाबी में हुआ था। तब से पंजाबी में इस कृति के लगभग पचास संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। उपन्यास की दृष्टि से इस रचना को पंजाबी भाषा का सर्वप्रथम उपन्यास होने का गौरव प्राप्त है।

भाई साहिब वीर सिंह जी की इस कृति की पृष्ठभूमि अठारहवीं सदी का मध्य काल है। यह वह समय था जब मुग़ल शासन की ओर से सिखों पर असंख्य ज़ुल्म ढाये जा रहे थे। सिख जंगलों, पहाड़ों और रेगिस्तानों में जा बसे थे। मुग़ल सेनाएं निरन्तर उनका पीछा करती रहती थीं। देश और धर्म की आज़ादी के मतवाले सिख अपने सिरों को हथेली पर रख कर मुग़ल सेनाओं से निरन्तर जूझते रहते। यही वह समय था जब नादिरशाह और अहमद शाह अब्दाली के आक्रमणों से पंजाब बुरी तरह त्रस्त था। न किसी की धन–दौलत सुरक्षित थी न मान–सम्मान। विदेशी आक्रान्ता यहां की सम्पत्ति के साथ ही यहां की स्त्रियों को भी लूट कर ले जाते थे। ऐसी परिस्थिति में सिखों के छोटे–छोटे जत्थे विदेशी सेनाओं पर अवसर देख कर आक्रमण करते और देश की सम्पत्ति और नारी जाति की भी रक्षा करते।

हमारा विश्वास है कि भाई साहिब भाई वीर सिंह जी के मूल उपन्यास का यह संक्षिप्त अनुवाद हिन्दी पाठकों को भी उसी तरह उत्प्रेरित करेगा, जैसे बीसवीं शताब्दी में यह पंजाबी पाठकों को करता आया है।

भाई वीर सिंह साहित्य सदन,
नई दिल्ली

डा: जसवंत सिंह नेकी
वरिष्ठ उपाध्यक्ष

अंतिका

भाई वीर सिंह जी की इस रचना 'सुंदरी' (पंजाबी) का प्रथम प्रकाशन सन् 1898 ई॰ में हुआ था। इसके लिखे जाने का आधार एक लोकगीत था, जो इसके प्रथम संस्करण में भी प्रकाशित हुआ था। यह लोकगीत बहुत पुराना है, वृद्धाएं इसे गाया करती थीं और सुंदरी की कहानी सुनाया करती थीं। लोकगीत इस प्रकार है:

नणद भरजाई चीणा छड़दीआं, फौज मुगलां दी चढ़िआ।
हाए वे सिपाही जांदिआं!
घर नहीं सी रांझा, आपणी गोरी नू कौण छुड़ा।
हाए वे...।

उडीं उडीं वे काग सुलक्खणे!
कहि मेरे बाप नू धी पकड़ी वीजा।
हाए वे...।

मुहरां दिआं डेठ लक्ख रूपये दिआं लक्ख चार,
मिन्नत मुथाजी करके धी लऊंगा छुडा।
हाए वे...।

अग्ग लावां तेरे लक्खां नूं मोहरां जल जा।
ऐसी सुंदर सोहणी साथों छडीआ ना जा।
हाए वे...।

उडीं उडीं वे कागा सुलक्खणे!
वीर वीर कोल जा।
जा कहीं मेरे वीर नूं भैण पकड़ी वीजा
हाए वे...।
मोती दिआंगा डेढ सौ मुहरां दिआं लक्ख चार।
हत्थ जोड़ कर बेनती भैण लवांगा छुड़ा।
हाए वे...।

अग्ग लावां तेरे मोतीआं मोहरां जल जा,
ऐसी सुंदर सोहणी साथों छडीआं न जा।
हाए वे...।

उडीं उडीं वे काग सुलक्खणे!
मेरे कंत कोल जा,
आखीं मेरे कंत नूं नार पकड़ी वीजा।
हाए वे...।

हीरे दिआं इक लक्ख लाला लख चार,
दो घड़ीआं दी बेनती सोहणी लऊं जा छुड़ा।
हाए वे...।

अग्ग लावां तेरे हीरिआं लालां जल जा,
ऐसी सुंदर सोहणी साथों छडीआ ना जा।
हाए वे...।

जाह बाप घर आपणे रक्खां तेरड़ी लाज,
मुगलां दा खाणा ना खावां
मैं खड़ी जल जा।
हाए वे...।

जाह वीर घर आपणे रक्खां तेरड़ी लाज,
मुगलां दा पाणी न पीवां
मैं खड़ी जल जा।
हाए वे...।

जाह कंत घर आपणे रक्खां तेरड़ी लाज,
मुगलां दी सेजे ना चढ़ां
मैं खड़ी जल जा।
हाए वे...।

बाप हमारा डिग दिआ वीर पिआ गश खा,
कंत हमारा हस पिआ करसां होर विआह।
हाए वे...।

मुगल गिआ सी पाणीऐं विच्छों गोरी चिखा बना,
सड़न लग्गी सी भन्नड़ी उत्तों वीर गिआ आ।
हाए वे...।

सुंदरी

हरे भरे खेतों से लहलहाते हुए मैदान में घुग्घ नाम का एक छोटा-सा गांव था। इस गांव में हिन्दू और मुसलमान दोनों तरह की आबादी थी। गांव से कुछ दूर एक घना वन और बड़ा-सा तालाब था। इस कारण शिकार खेलने वाले इस ओर बहुत आते-जाते थे।

गांव के पूर्व की ओर एक सड़क थी। इस ओर गांव की बाहरी सीमा की ओर एक धानाढ्य हिन्दु शामा का घर था। जिसकी बेटी का गौना होने वाला था। दोपहर ढल गयी और धीमी-धीमी हवा चलने लगी। शामा के घर में गौने की तैयारी में इतना धुआं और उमस हो रही थी कि अंदर खड़ा होना कठिन हो गया। गौने जाने वाली ज़वान लड़की जिसका नाम सुरसती था और जो बड़ी सुंदर थी, इस धुंए से तंग आकर अपनी सहेलियों के पास चली गयी जो घर के पिछवाड़े सड़क के पास खेल रही थी। यहीं लड़कियों का त्रिंजण लगा हुआ था। सभी लड़कियां जवान थीं, कुछ ब्याही हुई, कुछ गौने वाली और कुछ कुंवारियां। किसी का भी मुंह बदसूरत कहने योग्य नहीं था, पर सुरसती की सुंदरता के सम्मुख सभी इस तरह मात थीं जैसे चंद्रमा के सामने तारे। हंसती-खेलती लड़कियां एक आश्चर्य जनक तमाशा बन गयी थीं। इतने मे दो और युवतियां ननद-भाभी, थोड़ा-सा धान लेकर कूटने के लिए आ गयीं, क्योंकि वहीं पर एक पक्की ओखली भी बनी हुई थी जहां आस-पास की औरतें धान कूटने आया करती थीं। पहले तो लड़कियों ने उनकी खुब हंसी उड़ाई, पर फिर बारी-बारी थोड़ा-थोड़ा मूसल चलाकर वे भी धान कूटने लगी। जब सुरसती की बारी आई तो सभी मिलकर यह गीत गाने लगीं :

ढल परछावें बैठी आं असी मांवां धीवड़िया।'

सुरसती के मूसल की चोट इस गीत के ताल के साथ आकर लग रहे थे, मानो मूसल भी तबले की थाप हो गया हो। इस गीत में सभी ऐसी मगन हो गयीं जैसे अपने आप को पूरी तरह भूल ही गयी हों।

जब गीत पूरा हुआ तो वे क्या देखती हैं कि एक डरावना कड़ियल जवान मुग़ल घोड़े पर सवार त्रिंजण के पास खड़ा घूर रहा है। उसकी निशाने की तरह बंधी हुई आंखें सुरसती के चेहरे पर टिकी हुई हैं। उसे देखकर वह सुशील कन्या पसीने से तर-बतर हो गयी। सभी पर ऐसा सहम छा गया कि सभी पत्थर की भांति वहीं जड़ हो गयीं।

उन दिनो हिन्दू माता-पिता, उस अंधेर के समय लड़कियों को घर से बाहर बहुत कम निकलने देते थे, और लड़कियों-बहुओं को नज़रबंद कैदियों की भांति छिपा-छिपाकर रखते थे। इसका कारण यह था कि सुंदर स्त्री, सुंदर घर धन और माल किसी हिन्दू के पास मुश्किल से ही रह पाता था। दिल्ली के बादशाह का प्रभाव घट चुका था, छोटे-छोटे नवाब अपनी समस्याओं में घिरे रहते थे, देश में आपाधापी मची हुई थी और छोटे-छोटे हाकिम मन-मर्जी करते रहते थे।

उस मुग़ल की ऐसी नज़र देखकर लड़कियां डर गयीं कि पता नहीं यह क्या करेगा! पर लड़कियों की यह सोच बहुत कम समय में ही समाप्त हो गयी, जब उसने कुछ आगे बढ़कर सुरसती की नर्म कलाई शेर के पंजे की तरह जकड़ ली और धचके से घोड़े पर अपने आगे डालकर वह घोड़े को ऐड़ी लगाकर भाग निकला। सुरसती की चीखें और लड़कियों के शोर ने सारा गांव इकठा कर दिया। सभी हक्के-बक्के होकर कारण पूछने लगे। लड़कियों से समाचार सुनकर और अपनी आंखों के सामने यह उपद्रव देखकर सभी अचंभित होकर मुंह में उंगली दबा रहे थे, परन्तु इतनी भीड़ में किसी में इतना साहस नहीं हुआ कि वह जान पर खेलकर उसे छुड़ा लाए।

3 : सुंदरी

जब मुग़ल आंखों से ओझल हो गया तो गांव के सयाने लागों ने बैठकर सलाह की लड़की का पिता, भाई और पति और दो पंच उस मुग़ल के पास जाकर विनती करें। शायद इससे उसके मन में दया उत्पन्न हो जाए।

गांव से मील-भर की दूरी पर उसके तम्बू लगे हुए थे। वह इस क्षेत्र का हाकिम था और यहां शिकार खेलने आया था। वह अपने साथ बहुत थोड़े नौकर-चाकर लेकर आया था। आज वह शिकार खेलने के लिए निकला तो पीछे डेरे पर कोई सिपाही न छोड़ा, सभी को साथ ले गया। शिकार खेलते हुए उसने एक हिरन के पीछे अपना घोड़ा छोड़ दिया। वह अपने नौकरों से बिछड़कर दूर निकल गया। उसे हिरन तो न मिला पर गांव देखकर पानी पीने के लिए इधर आया तो कन्या का शिकार हाथ लग गया। उसे लेकर वह मुग़ल जब अपने डेरे पर पहुंचा तो वहां कोई नौकर हाज़िर नहीं था। इसलिए इस लड़की को एक दरी पर बैठाकर घोड़ा बांधने और जल पान करने के काम में लग गया। फिर वह सुरसती के पास आया। इतने में गांव के लोग भी वहां पहुंच गये। सुरसती एक दरी पर बैठी रो रही थी और हाकिम पलंग पर बैठा हुआ था। पांच व्यक्तियों ने उसके सामने आकर सिर झुकाया और कन्या को छोड़ देने की विनती की।

हाकिम बोला ''तुम नहीं जानते कि मैं इस इलाके का हाकिम हूं। क्या हुआ यदि लड़कियों के झुंड में से मैं एक को ले आया हूं। इससे तुम्हें कुछ घाटा तो नहीं पड़ जाएगा।

शामे ने हाथ जोड़कर कहा, ''हजूर, यह मेरी बड़ी लाडली बेटी है और ब्याही हुई है। इसका आज गौना है। आप दया कीजिए, नहीं तो मेरी नाक कट जाएगी...हाकिम तो प्रजा के माई-बाप होते हैं।

हाकिम बड़े रूखे स्वर में बोला, ''जाओ...जाओ मैं इसे नहीं छोड़ूंगा।''

पिता ने कहा, ''हजूर, आपको क्या परवाह है। आप चाहें जुर्माना के रूप में इस लड़की के बराबर तोलकर चांदी ले लीजिए, पर इसे छोड़ दीजिए।

हाकिम ने बड़ी क्रूर हंसी हंसते हुए कहा, ''जााओ...जाओ।''

फिर लड़की के भाई ने हाथ जोड़कर गले में पल्ला डालकर कहा, ''हजूर, आप को क्या परवाह है। आपके पास हज़ारों औरतें हैं। इस अनाथ पर दया कीजिए। आप चाहें तो आपकी सेवा में इस के बदले सोना हाजिर कर दूं। आप कहें तो कितनी ही दासियां खरीद देता हूं। आप बड़े उदार हैं। कृपा करके यह दान कीजिए।''

भाई की बात सुनकर उस पत्थर दिल हाकिम ने अपना सिर दूसरी ओर घुमा लिया।

फिर लड़की के पति ने, जो उसका गौना लेने आया था। पैर पड़कर कहा, ''मैं आपकी प्रजा हूं। प्रजा की लाज राजा की लाज होती है। मै कहीं मुंह दिखने योग्य नहीं रहुंगा। आप कृपा कीजिए। मेरे पास जो भी धन-माल है उसकी भेंट कबूल कीजिए ओर मेरी स्त्री मुझे लौटा दीजिए।''

नवाब ने बड़े व्यंग्य से कहा, ''अच्छा, तुम लोग बहुत अमीर हो। जाओ...जाओ...मैं इस सोने की चिड़िया को नहीं छोड़ूंगा। सोना, चांदी मौती, हीरे मुझे कुछ नहीं चाहिए। तुम लोग यहां से चले जाओ नहीं तो तुम सब को कैद कर दूंगा।''

यह सुनकर सुरसती का पति डर गया। उसने सोचा कि मैं तो अपने आपको इसके सम्मुख धनवान आदमी बता बैठा हूं। कहीं यह न हो कि यह मेरा घर बार ही लूट ले। यहां से खिसकना ही ठीक है। यह सोच कर वह खिसका और ससुराल के गांव में आकर अपने साथियों को लेकर अपने घर की ओर चल दिया।

गांव के पंचों की मिन्न्त-खुशामद को भी जब हाकिम ने नहीं माना तो लड़की का भाई बेहोश होकर गिर पड़ा, बूढ़ा बाप सिरहाने बैठकर

रोने लगा। यह दशा देखकर सुरसती के मन में पता नहीं क्या बात आई कि उसके आंसू सूख गये और मन में साहस भर गया। उसने अपना घूंघट हटा दिया और उठकर अपने भाई के सिरहाने आकर उसके कान में बोली, "उठ, मेरी मां जाए भाई उठ। तुम अपने घर जाओ। मैं आग जलाकर जल मरूंगी, पर इस मुग़ल के हाथ का पानी भी नहीं पीऊंगी।"

जब बाप और भाई को यह विश्वास हो गया कि यह अत्याचारी किसी भी तरह इस लड़की को नहीं छोड़ेगा और लड़की अपने धर्म को कलंकित नहीं होने देगी, तो सभी टूटी कमर और खिन्न हृदय से अपने घरों की ओर चल दिये।

वह सुंदर घर जो कुछ देर पहले आनन्द-उल्लास का स्थान बना हुआ था अब रोने-धोने की जगह में बदल गया। सभी रिश्तेदार दिल जोई करने के लिए आ जुड़े और स्त्रियों के रोने-पीटने से चारों ओर हाहाकार मच गयी। गांव के सभी हिन्दू और मुसलमान दांतों में उंगली दबाकर कह रहे थे, हाय अंधेर...हाय अनर्थ।

जब सभी लोग इस प्रकार से अपना-अपना दु:ख प्रकट कर रहे थे कि अचानक एक घुड़सवार वहां आ पहुंचा। उसने शस्त्र धारण किये हुए थे। घुटनों जक पहुंचने वाले कच्छे के ऊपर के कमरबंद से कसा हुआ लम्बा कुरता उसने पहन रखा था। उसके सिर पर सुरमई रंग की पगड़ी थी, चेहरा भरा हुआ सिंह बहादुर, जिसे देखर भूख उतरती थी। सबकी नज़रें उधर उठ गयीं। और तो कोई पहचान न सका, पर सुरसती की मां ने, जो स्त्रियों के बीच बैठी हुई थी, तुरन्त पहचान लिया कि यह उसका पुत्र है जो विद्रोही सिखों की संगत में आकर सिख बन गया था और उन्हीं के साथ रहता था। पुत्र को देखकर मां की ममता जाग उठी। पिता और बड़े भाई ने भी पहचान लिया। सबने उसे सुरसती की कहानी सुनाई।

बलवंत सिंह ने अपनी बहन के साथ हुए जुल्म की कहानी सुनी तो उसकी आंखों में खून उतर आया क्रोध से उसका अंग-अंग कांपने

लगा। उसने पूछा कि उस मुगल का डेरा किधर है और फिर तुरन्त घोड़े पर सवार होकर उस दिशा में चल दिया उसके जाने से पहले मां-बाप ने उसे बहुत समझाया कि उस ओर न जाओ, हाकिम तुम्हें जिन्दा नहीं छोड़ेगा। पर बलवंत सिंह ने एक ना सुनी। कुछ देर में वह घोड़ा दौड़ाता हुआ तम्बुओ के पास पहुंच गया। उसने देखा कि लकड़ियों के ढेर से सुलगती हुई आग निकल रही है और पास से ही "जपुजी साहिब" के पाठ की आवाज आ रही है। एक क्षण में बलवंत सिंह सब कुछ समझ गया। वह घोड़े से छलांग लगाकर उतरा और इससे पहले कि उसकी बहन आग में कूदे उसने उसे थाम लिया। सुरसती अपने भाई को देखकर अचंभे और खुशी से भर गयी और बोली, "मेरे प्यारे वीर, मरते समय तुमसे मिलने के अतिरिक्त मेरे मन और कोई चाह नहीं थी। वाहिगुरू ने वह इच्छा भी पूरी कर दी। अंत समय में तुम भी आ मिले हो। अब तुम तुरन्त यहां से चले जाओ क्योंकि वह मुगल पानी की खोज में गया है और अभी आने ही वाला है और मैं उसके आने से पहले ही जल मरना चाहती हूं।"

भाई ने कहा, "प्यारी बहन, आत्महत्या करना महापाप है। तू चल मेरे साथ।"

बहन बोली, "नहीं वीर जी, धर्म की रक्षा के लिए मरना बुरा नहीं है। और यदि मैं तुम्हारे साथ चली गयी तो यह पापी हमारा सारा घर उजाड़ देगा और तुम्हें भी नहीं छोड़ेगा। मैं मरने से बिलकुल नहीं डरती। गुरू तेगबहादुरजी मेरे अंग-संग हैं। तुम जाओ। मेरे मरने से बहुतों की जान बच जाएगी।"

बलवंत सिंह को दूर से कुछ खड़खड़ाहट सी सुनाई दी। उसने बहन की बात बीच में ही काट दी और उसे बाहों से घसीटकर घोड़े पर डालकर हवा हो गया। जब वह बहन को लेकर घर पहुंचा तो उसका पिता और भाई बहुत नाराज होकर बोले, "अरे मूर्ख, तूने यह क्या किया? भला अब वह हाकिम हमें छोड़ेगा? जब उसे यह मालूम होगा

कि हमारा बेटा सिख है, वह आग बबूला हो जाएगा। ऊपर से तुम इस लड़की को भी वापस ले आये हो। वह तो भूखे शेर की तरह हम पर टूट पड़ेगा। भले मानुस बनो। जिधर से आए हो उधर ही जाओ और इस लड़की को उसे सौंप आओ।''

अपने घर वालों की ये बातें बलवंत सिंह सह न सका। उसने उसी समय घोड़े को एड़ी लगाई और बहन को साथ लेकर चल पड़ा। लगभग एक घंटे बाद वह एक खुले मैदान में पहुंचा। उसने देखा वहां लाशों के ढेर लगे हैं और खून से धरती लाल हो रही है। यह देखर बलवंत सिंह हक्का-बक्का रह गया। वह और सुरसती घोड़े से उतरकर लाशों को देखने लगे। कुछ देर में उन्हें एक शरीर सिसकता हुआ दिखाई दिया। उन्होंने उसे उठाकर देखा। उसके घाव ज्यादा गहरे नहीं थे। एक पगड़ी फाड़कर भाई-बहन ने उसके घाव बांधे और पास के तालाब से पानी लाकर उसके मुंह में डाला। घायल व्यक्ति की आंखें खुली और वह धीरे से बोला, '' भाई बलवंत सिंह, अच्छा हुआ कि तुम इस अंत समय में मिल गये।''

बलवंत सिंह ने कहा, ''शेर सिंह, यह क्या हुआ? इतनी ही देर में ऐसा क्या कोहराम हो गया?''

शेर सिंह बोला,''मेरे भाई, जब तुम अपने घर गये, हम लोग डेरे पर ही थे। अचानक तुर्कों ने हमला बोल दिया। घमासान युद्ध के बाद अपने खालसा वीर घने जंगल की ओर भाग गये। मैं लड़ाई में घायल होकर गिर गया था। लड़ाई में बहुत से तुर्क मारे गये, पर उनकी गिनती बहुत ज्यादा थी। फिर पता नहीं क्या हुआ?''

बलवंत सिंह ने उसे एक वृक्ष की छांह में लिटा दिया और दूसरे जीवित साथियों की खोज में लग गया। सभी सिख-शहीदों में से एक में कुछ जान बची थी। यह भी चोट खाकर बेहोश हो गया था। उसे भी पानी पिलाकर होश में लाया गया। पास ही एक पेड़ से बंधे दो घोड़े मिल गये। यह तय हुआ कि एक घोड़े पर सुरसती सवार हो, दूसरे

पर वह घायल सवार हो जिसे चोट कम लगी थी और बलवंत सिंह अपने घोड़े पर घायल शेर सिंह को ले और रात बीतते-बीतते घने जंगल की ओर चले जाएं।

अभी ये अन्य घायलों की जांच-पड़ताल कर ही रहे थे कि इन्हें पिछली तरफ से धूल उड़ती दिखाई दी और कुछ क्षण में तुर्क सवारों का एक दस्ता आता दिखाई दिया। ध्यान से देखने पर यह निश्चित हो गया कि वही मुगल इस कन्या की खोज करता हुआ आ रहा है।

यह देखकर तीनों नें घोड़े दौड़ाने शुरू कर दिये। आगे-आगे ये जा रहे थे, पीछे लगभग एक सौ तुर्क घुड़सवार इनका पीछा कर रहे थे। तीन-चार मील की दौड़ के बाद शेर सिंह का घोड़ा ठोकर लगने से गिर पड़ा और इतने में तुर्कों ने आकर उन्हें घेर लिया। थोड़ी देर दोनों पक्षों में तलवारें चलती रही। आठ-दस तुर्क गिर गये। हाकिम भी जख्मी हो गया शेर सिंह और दूसरा जख्मी सिख मारे गये। सुरसती और बलवंत सिंह को कुछ घाव लगे और दोनों बंदी बना लिये गये।

(2)

घने जंगल में सिखों ने पेड़-पौधे काटकर एक खुला मैदान बना लिया था। पंजाब के जंगलों में ऐसे अनेक स्थान थे जहां विपत्ति आने पर सिख छिप जाया करते थे। उन्हें उन वनों के पत्ते-पत्ते का परिचय था, परन्तु शत्रुओं के लिए उन घने जंगलों में पहुंचना बहुत कठिन काम था। एक दिन दोपहर ढले उस जंगली मैदान में दीवान लगा हुआ था। गुरू ग्रंथ साहिब की बीड़ सजी हुई थी और पांच सिख बैठकर गुरूवाणी का गायन कर रहे थे। इस जत्थे का सरदार शामसिंह था। विशाल डील-डौल और सेबों जैसे लाल चेहरे वाला वह एक सजीला जवान था। पाठ की समाप्ति के बाद उसने पूछा, "खालसा जी, किसी को बलवंत सिंह के बारे में कुछ पता है।"

सबने सिर हिला दिया। एक ने कहा, "वह जब से अपने गांव गया है, वापस नहीं आया। शायद घर के सुखों में पड़ गया हो।"

शामसिंह बोला, "यह अनहोनी बात है। बलवंत सिंह जरूर किसी विपत्ति में पड़ गया है।"

राठौर सिंह बोला, "जत्थेदार जी, किसी को उसके गांव भेजा जाए जो उसका पता भी लगा लाए।"

एक सिंह ने कहा, "यदि मुझे आज्ञा हो तो मैं अभी उसकी खबर लेने चला जाता हूं।"

सरदार ने कहा, "जाओ भाई, उसकी खबर ले आओ। पर जल्दी वापस आना। और अपना वेश बदल लो, मुगल बन कर जाओ। सिख-वेश में जाओगे तो शायद किसी मुसीबत में फंस जाओ। और भी समाचार लेकर आना...अपने दूसरे खालसा भाईयों का क्या हाल है? लाहौर की ओर से कौन-सी बुरी खबरें आ रही है।

यह बात सुनकर हरिसिंह नाम के उस सिख ने गुरू ग्रन्थ साहब के सम्मुख मस्तक झुकाया। फिर उसने डेरे में ही अपना मुगल वेश बना लिया और घोड़े पर सवार होकर चल पड़ा। सूर्यास्त होने वाला था और संध्या सधे कदमों से बढ़ी चली आ रही थी। हरिसिंह अपने धर्म-कार्य के लिए निडर शेर की भांति चल पड़ा। कुछ दूर चलकर घना जंगल आ गया। उसने घोड़े से उतरकर लगाम पकड़ ली, चक्कर खाते, कहीं डालियों में फंसते-निकलते बड़ी कठिनाई से वह जंगल पार हो गया। सुबह होने वाली थी। वह एक छोटे से गांव में पहुंचकर वहां की टूटी-फूटी धर्मशाला में जा घुसा। यहां एक मुसलमान तंदूर-वाला और एक बनिया दुकानदार रहता था। वे मुगल की शक्ल देखकर सम्मान से उठ खड़े हुए और उसके लिए चारपाई बिछाकर घोड़े के लिए चारा आदि ले आए। खाने के विषय में पूछने पर उसने कहा-मुझे भूख नहीं है। घोड़े को पेड़ से बांधकर हरिसिंह चारपाई पर लेट गया और उसे नींद आ गयी। लगभग दो घंटे बाद कुछ शोर-सा हुआ। हरिसिंह ने सिर उठाकर देखा कि कोई अमीर सरदार वहां आया है। नौकर-चाकर साथ हैं। कुछ देर तक शोर-शराबा रहा, फिर उन्होंने वहां

अपना डेरा लगा लिया। अमीर सो गया। कुछ नौकर सो गये और कुछ लेटे-लेटे गपशप करने लगे। दो सिपाही हरिसिंह के पास लेटे बातें कर रहे थे। वह सोने का बहाना कर उनकी बातें सुनता रहा।

पहला सिपाही बोला, "अरे, यह बलवंत कौन है।"

दूसरे ने कहा, "यह वह काफिर है ना, जो नादिरशाह पर पीछे से हमला करने वाले सिखों में बड़ा दिलेर आदमी कहा जाता है। इसने पहली लड़ाई में रूस्तम को मारा था।"

पहले ने कहा, "यह तो बड़ी किस्मत की बात है कि ऐसा बहादुर आदमी पकड़ा गया।"

दूसरा बोला, "और जो तुम उसकी बहन को देख लो तो देखते रह जाओ। अब तो वह परदे में है, पर जब उसे पकड़ा गया था, मैं भी साथ था। भाई, वह तो चांद का टुकड़ा है। पता नहीं क्या बात है कि हिन्दुओं की औरतें बहुत सुंदर होती हैं।

पहला बोला, "उस औरत को भी मुसलमान बनाया जाएगा।"

दूसरे ने कहा, "हां, हां, फिर नवाब साहब से उसका निकाह पढ़ाया जाएगा। बड़ी धूमधाम होगी। हमें भी इनाम मिलेगा।"

पहला बोला, "पर बहन-भाई ने हमारे दीन में आना मान लिया है कि नहीं?"

दूसरा बोला, "ये सिख भी कभी खुशी से अपना धर्म छोडते हैं? इन्हें तो बांधकर खीर खिलानी पड़ती है। वैसे तो ये सदा तलवार का पानी ही चखते हैं।"

पहले ने कहा, "हां ठीक है। ये लोग बड़े हठी हैं। पता नहीं कहां से उमग आए हैं? भला, अब कितना रास्ता बाकी है?"

दूसरे ने कहा, "थोड़ा ही है। इसी जुमे (शुक्रवार) को यह काम भी हो जाएगा।"

पहले ने कहा, "इस काम में इतनी देर क्यों की गयी है। बलवंत सिंह को गिरफ्तार किये एक महीने से ज्यादा हो गया है। इस काम में इतनी ढील क्यों डाली गयी?"

दूसरे ने उत्तर दिया, "बलवंत सिंह और उसकी बहन दोनों ही घायल थे। अब वे कुछ ठीक हुए हैं।"

ऐसी बातें करते हुए वे तो सो गये और हरि सिंह चुपचाप उठकर घोड़े पर काठी रखकर मक्खन से बाल की तरह वहां से निकल गया। अंधेरी काली रात थी, रास्ता दिखाई नहीं देता था, आसमान में बादल छा रहे थे, कदम-कदम पर ठोकर लग रही थी। परन्तु गुरू गोबिन्द सिंह के वीर कभी हौसला नहीं हारते। पौ फटने से पहले ही हरि सिंह ने जंगल में प्रवेश कर लिया और सूरज निकलते-निकलते अपने डेरे पर जा पहुंचा।

इस समय सभी सिंह स्नानादि से निवृत्त होकर बैठे "आसादी वार' का पाठ कर रहे थे। हरि सिंह भी उनमें शामिल हो गया।

जब पाठ की समाप्ति हुई तो उसने जो बातें गांव की सराय में सुनी थीं, सभी को सुना दी, "भाई बलवंत सिंह और उसकी बहन दोआबे में कैद हैं और शुक्रवार को उन्हें जबरदस्ती मुसलमान बनाया जाएगा। आज मंगलवार है। यदि हम हिम्मत करें तो अभी समय है।"

यह खबर खालसे को आग की तरह लगी। सभी के चेहरे गुस्से से लाल हो गये। छाती में दिल और दिल में क्रोध ने जोश मारा और 'गुरू-गुरू' का शब्द गूंजने लगा।

सरदार शाम सिंह को अपने जत्थे का एक-एक सिख जान से बढ़कर प्यारा था, पर बलवंत सिंह तो एक चुनिंदा बहादुर और योद्धा था। और एक कन्या का तुर्क-पंजे में फंसना किस प्रकार सहा जा सकता था। उन्होंने तुरंत सम्पूर्ण जत्थे को एकत्र कर आज्ञा दी कि इसी समय कूच करना है। भोजन भी रास्ते में ही किया जाएगा। जंगल के मार्ग से चलना है। सारा काम बहुत फुर्ती का है।

यह आज्ञा सुनकर सारा जत्था घोड़े कसकर सवार हो गया।

(3)

सूरज देवता बादलों में छिपे हुए थे। बादलों के दल के दल बेकाबू फौज की तरह आसमान में घूम रहे थे। हवा की चाल भी आश्चर्यजनक है। किसी समय शोर शराबा करती, धूल उड़ाती, तेज चलती है, किसी समय मद्धिम-मद्धिम रूकने लगती है। मुगल लोग लम्बी तहमद बांधे झुण्ड के झुण्ड इधर-उधर घूम रहे हैं। बिचारे दुकानदार सुस्त और उदास बैठे दिखाई देते हैं। बड़ी मस्जिद में अजीब हालत है। टोलियों की टोलियां इकट्ठी आतीं और बैठ जाती हैं। मस्जिद के बाहर दुकानों के आगे दोनों ओर कुछ शस्त्रधाारी फौजी सिपाही तैनात हैं।

वह सामने की ओर से क्या आया? यह एक पालकी है जो बेगार में पकड़े चार ब्राह्मणों के कंधों पर रखी हुई है। उसमें एक बड़े मुल्लाजी विराजमान हैं जो आज के दिन के लिए विशेष रूप से बुलाए गये हैं। मस्जिद के दरवाजे पर आकर मुल्लाजी उतरे और अंदर घुसे। सभी ने उन्हें सम्मान से आगे बैठाया। इतने में पांच-सात सैनिक घोड़े दौड़ाते हुए आए। उनके बाद नवाब साहब की सवारी पहुंची। भला अब कौन-कौन आए। एक पालकी बंद है, साथ में हथकड़ी से जकड़ा हुआ एक व्यक्ति चला आ रहा है। उसके वस्त्र बहुत गंदे हैं। सिर पर छोटी-सी पगड़ी है। पर उसकी आंखें लाल हैं जिनमें से क्रोध के वाण निकल रहे हैं।

मस्जिद के दरवाजे के आगे पालकी में से एक बुरके वाली उतरी। दोनों व्यक्ति मस्जिद में गये, दोनों मुल्ला के आगे बैठाए गये। मस्जिद इस समय भरी हुई थी। सभी चुपचाप देख रहे थे कि मुल्ला साहब बोले, "बलवंत सिंह तुम दीन इस्लाम को खुशी से कबूलते हो?"

बलवंत ने कहा, "मैं मौत को खुशी से कबूलता हूं।

मुल्ला नवाब की ओर देखकर बोले, "यह बड़ा मूजी है। यह ऐसे नहीं मानेगा। इसे या तो कत्ल किया जाए या जबरन...।"

नवाब बोला, "हां, पिछली बात अच्छी है। मैं इस सुंदरी के भाई को कत्ल नहीं करना चाहता।"

मुल्ला, "हज्जाम (नाई) हाजिर है?"

नाई, "हां हजूर।"

मुल्ला, "इधर आओ और इसके बाल काटो।"

नाई, "बहुत अच्छा।"

यह बात कह नाई ने अपनी पोटली खोली। भले ही बलवंत सिंह के हाथ बंधे हुए थे, परन्तु उसका जोर से हिलना ही सुकड़े नाई के लिए बहुत था। यह देखकर चार सिपाहीयों ने बलवंत सिंह को पकड़ लिया और नाई महाशय फिर आगे आये। इस बार बुरकेवाली ने, जिसके हाथ पैर नहीं बंधे थे, बुरका उतारकर फेंक दिया और बड़ी फुरती से नाई को कंधों से पकड़ कर ऐसी पटकनी दी कि वह बेचारा गेंद की तरह लुढ़कता हुआ दूर जा गिरा। वह लड़की खूंखार शेर की तरह खड़ी हो गयी। उसकी सुंदरता और सुंदरता पर क्रोध का लहु चेहरे पर देखकर लोगों की भीड़ दंग रह गयी। सौन्दर्य प्रेमी नवाब यह देखकर ऐसा अचंभित हुआ जैसे उसे बिजली लग गयी हो। मुल्ला ने तुरन्त दो सिपाहियों को इशारा किया। उन्होंने वीर रमणी सुरसती को पकड़ लिया और पीछे की ओर उसके हाथ करके मुश्कें बांध दीं।

यह देखकर नवाब कुढ़ रहा था, पर वह मुल्ला और भीड़ से डर रहा था। वह सोच रहा था कि यदि मैं कुछ कहूंगा तो लोग कहेंगे कि मैं काफिर के प्रति दया दिखा रहा हूं। चाहे कुछ क्षण में ही सुंदरी मेरी बेगम बन जाएगी, पर अभी तो काफिर ही है।

इतने में नाई ने अपने आपको संभालकर फिर आगे बढ़ना चाहा। इस समय सुरसती की स्थिति बड़ी शोचनीय थी। वह बड़े प्रेम और निराशा से अपने भाई को देख रही थी और सोच रही थी कि हाय! उसके कारण ऐसे शूरवीर भाई की क्या दुर्दशा हो रही है।

इतने में बाजार से धूल उड़ती दिखायी दी और कोलाहल सुनाई दिया। किसी ने समझा आंधी है किसी ने समझा और मकान गिर गया है किसी ने समझा कि तेज भूचाल आया है, किसी ने समझा कि कोई हाकिम अपने घुड़सवारों सहित इस खुशी में शामिल होने के लिए आ रहा है। सभी की आंखें उस दिशा की ओर देखने लगीं थीं। एक क्षण में ही वह आंधी घुड़सवारों में बदल गयी और बाजार में खड़े सिपाहियों से मार काट शुरू हो गयी। एक दस्ते के सवारों ने मस्जिद में घुस कर जयकारा गुंजाया और किसी बलवान हाथ ने बलवंत सिंह को उठाकर घोड़े पर डाल लिया। किसी एक हाथ ने सुरसती को घोड़े पर चढ़ा लिया और सभी सवार तेजी से मस्जिद से बाहर निकल गये। सिखों की यह फौज मस्जिद से बाहर निकल कर बड़े बाजार के रास्ते पूर्वी दरवाजे से बाहर निकलने के लिए आगे बढ़ी। अचानक दस्ते का नेतृत्व कर रहे शाम सिंह ने 'धर्म' की आवाज दी और सारा दस्ता खड़ा हो गया। कारण यह था कि उस दरवाजे पर पहरे के सिपाहियों ने जो पहले यह समझे थे कि कोई मेहमान हाकिम अपनी फौज सहित आ रहा है और फिर सिखों को देखकर छिप गये थे अब कुमुक बुलाकर इन्हें रोकने की तैयारी कर ली थी।

यह देखकर स० शाम सिंह ने चुने हुए बंदूकचियों को आगे बढ़ाया। इन्होंने एक नजर से उन तोपचियों को देखा जो नगर द्वार पर मोर्चा लिये हुए थे फिर बंदूक का निशाना साधाकर ऐसी गोली चलाई कि दोनों तोपची कबूतरों की तरह नीचे आ गिरे। उनके गिरते ही स० शाम सिंह ने दस और सिखों को आगे बढ़ाया। इन्होंने तीरों की ऐसी बौछार की कि दरवाजे के ऊपर जितने भी आदमी थे उन्हें बींध दिया। फिर सारी फौज दरवाजे पर टूट पड़ी और देखते देखते उसने बादाम के छिलके की तरह दरवाजे को तोड़ डाला। दुश्मन की फौज का एक दस्ता बाहर खड़ा था। शाम सिंह ने ऐसा संकेत किया कि सारी सिख फौज तलवारें निकाल कर दायें-बायें मार करती हुई सरपट घोड़े दौड़ाती शत्रु को चीरती हुई दूर निकल गयी।

(4)

जब सारी सेना पांच–सात कोस निकल आई तो हरे–भरे खेतों के बीच एक खुला मैदान देखकर उसने उतारा किया। घोड़े पेड़ों से बांधा दिये और उनके सामने घास डाल दी। कुछ सैनिक खाने–पीने का प्रबन्ध करने पास के गांव को चले गये। सरदार शामसिंह एक कपड़ा बिछाकर बैठ गए। बलवंत सिंह और सुरसती के हाथ–पैरों के बंधान खोले गये। इस समय का दृश्य देखने योग्य था। प्रत्येक बहादुर सैनिक आता और बलवंत सिंह से गले लगकर मिलता और सुरसती को हाथ जोड़कर "वाहे गुरूजी की फते" बुलाता। जब सब मिल चुके और अनेक बार "गुरूबर अकाल" के जयकारों से आकाश गुँज़ा चुके तो जत्थेदार जी के संकेत से बलवंत सिंह और सुरसती उनके पास आ बैठे। बलवंत सिंह ने अपनी आप बीती सुनाई कि कैद होने के बाद उसे और सुरसती को कितने दु:ख झेलने पड़े।

सरदार शाम सिंह ने बताया कि तुम्हारा पता मिलते ही हमने जंगल के रास्ते से कूच किया। पर हम रास्ता भटक गये, इसलिए देर हो गयी। इतने में वे सिख लौट आए जो गांव की ओर भोजन की सामग्री लेने गये थे। उन्होंने बताया कि इस गांव में हिन्दू बहुत कम हैं और तुर्कों का जोर है। ये मूल्य लेकर भी खाने–पीने की चीजें देने को तैयार नहीं हैं।

शाम सिंह ने कहा– "गांव के पंचों को पकड़ लाओ।"

सिखों ने दो व्यक्तियों को पेश किया और कहा कि ये पंच हैं, जिन्हें हम पकड़ लाए हैं।

शाम सिंह ने उनसे पूछा– "क्यों भाई चौधरी, हमें खाना क्यों नहीं देते?"

पंच बोले– "बादशाह का हुक्म नहीं है।"

शाम सिंह ने कहा– "इस समय खालसा ही बादशाह है।"

पंच बोले– "खालसे का क्या पता। बादल–छाया की तरह अभी यहां है अभी गायब। आप कल पता नहीं कहां होंगे?"

शाम सिंह ने आज्ञा दी "दस–बीस लोग जाकर गांव से खाने–पीने की चीजें ले आओ। पर किसी स्त्री या बच्चे को दु:ख न देना और न ही खाने–पीने की चीज के अलावा किसी और चीज को हाथ लगाना।"

सरदार यह हुक्म दे ही रहा था कि तीन–चार मुसलमान स्त्रियां बुरका पहने हुए और 14 वर्ष के एक बालक को साथ लिए रोती हुई वहां आ गयीं। उन्होंने कहा, "आप हमारे मर्दों को मारे नहीं। आपको जो कुछ चाहिए हम दे देती हैं।

सरदार ने कहा, "बस हमें थोड़ी सी रोटियां चाहिए।"

स्त्रियों ने कहा, "हम अभी हिन्दुआनियों से बहुत सी रोटियां पकवाकर भेज देती हैं, पर आप हमारे मर्दों को तो कुछ नहीं कहेंगे?"

शाम सिंह ने कहा, "नहीं, हम अन्न का मूल्य चुकाएंगे। प्रजा को लूटना या मारना खालसे का काम नहीं है। बादशाही फौज की आखों में धूल झोंकना सेना को हराकर खजाना लूट ले जाना हमारा काम है, हम अन्याय के बैरी हैं, प्रजा के दुश्मन नहीं हैं। जाओ जल्दी करो। मूल्य लो, अन्न दो। तुम्हारे मर्द सुखी बसें।"

वे स्त्रियां तुरन्त गांव गयीं और सभी हिन्दू स्त्रियों को घरों से निकालकर, अपने पास से आटा–दाल देकर भोजन पकाने पर उन्हें लगा दिया। कई तंदूर गरम हो गये, कई पतीले आग पर चढ़ गये। रोटी पकने तक भूखे सैनिकों ने खेतों से गाजर तोड़कर खायी। जब दाल–रोटी आ गयी तो जी भर कर भोजन किया। तृप्त होकर उन्होंने पंचों को छोड़ दिया। अन्न तथा गाजरों के मूल्य के रूप में उन्हें कुछ मोहरें दे दीं और वहां से कूच कर दिया।

जब शाम होने को आई तो तुर्कों की फौज का एक दस्ता इसी गांव में आ पहुंचा। फौज के सरदार ने पंचों को बुलाकर पूछा कि क्या इस तरफ से सिखों की कोई फौज निकली है।

पंचों ने कहा, "हां हजूर सिखों की फौज यहां उतरी थी। रोटी-पानी खा-पीकर थोड़ा समय हुआ, यहां से गयी है।"

मुगल सरदार ने पूछा, "खाना किसने दिया?"

पंचों ने कहा, "गांव के हिन्दुओं ने।"

सरदार ने पूछा, "किसी मुसलमान ने भी?'

पंचों ने कहा, "नहीं जी, मुसलमान कभी काफिरों की मदद करते हैं? सिखों को देखकर इन हिन्दुओं की बांहें खिल जाती हैं।"

यह सुनकर मुगल सरदार क्रोध से लाल हो गया। उसने उसी समय गांव के हिन्दुओं को पकड़ मंगवाया। न कोई पूछ-ताछ हुई, न कोई प्रमाण या गवाही ली गयी। अंधा-धुंध उनकी मार-कुटाई शुरू हो गयी। इस मारपीट में कितने बिचारे जान से मारे गये।

(5)

उपरोक्त समाचार को कुछ दिन बीत गये हैं। भीड़ी जूह में फिर जंगल में मंगल हो रहा है। वन के वृक्षों के नीचे धर्मी बहादुरों की गहमागहमी हो रही है। कोई पाठ कर रहा है। कोई कपड़े पहनता है, कोई लंगर के लिये लकड़ियां ढूंढ रहा है। कोई फलों की खोज में है। मानो ये शेर अपने आनन्द भवन में निशिचिन्त होकर मौज लूट रहे हों। इन्हें यह बात याद ही नहीं कि हमारे मां-बाप कहां हैं और घर बार किस ओर हैं? इनके रोम-रोम में गुरू गोविन्द सिंह जी की प्रीति समा रही है और धर्म की रक्षा करना इन्होंने अपने जन्म का काम समझा हुआ है। इस कारण ऐसे भयावह वनों में निर्भय शेर की भांति गरज़ रहे हैं।

रात का समय है। सारी संगत भोजन करके सोने की तैयारी कर रही है। एक चादर पर वीर शिरोमणि शाम सिंह जी बैठे हैं। बातें हो रहीं हैं।

शाम सिंह- हां तो बहन, तुमने क्या सोचा है?"

सुरसती- "जैसी आपकी आज्ञा हो।"

शामसिंह– "हमारी आज्ञा क्या। जैसी तुम्हारी खुशी हो हम वैसा ही कर दें। यदि तुम चाहो तो तुम्हारे स्वामी को पकड़ लायें और तुम उनके साथ रहो। यदि तुम्हें वहां पहुंचाना हो तो हम वहां पहुंचा सकते हैं, पर मुगल तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ेगा। जो बात तुम कहो वही हो जाएगी। बलवन्त सिंह हमारा भाई है। सभी सिंह उसे प्यार करते हैं, यह पूरा सिंह और बड़ा योद्धा है। तुम इसकी बहन हो। सभी खालसे तुम्हें बहन के समान समझते हैं।"

सुरसती– "महाराज, भाई साहब। गृहस्थ मार्ग से मेरा मन ऊब गया है और मेरे स्वामी मुझे स्वंय त्याग गये हैं। मेरी रक्षा करना उनका धर्म था जिससे वे कतरा गये हैं। मैं अब फिर से उस धन्धे में नहीं पड़ना चाहती जिससे मुझे गुरूजी ने बचा लिया है। मेरी इच्छा यह है कि मेरी उम्र खालसा जी की सेवा में ही सफल हो। यदि आप आज्ञा दें तो मैं अपने भाइयों के साथ रहूं। जब सुख के दिन हों तो लंगर आदि की सेवा करूं। जब युद्ध हो तो भी मैं साथ रहूं और घायल भाइयों के मरहम–पट्टी किया करूं। मुझसे यह नहीं देखा जाता कि मेरा भाई धर्म के लिए जान हथेली पर धरे फिरे और मैं अपना जीवन धर्म के लिए अर्पण न करूं। आपकी कृपा से मैं गुरूवाणी पढ़ूं। नाम जपूं और सेवा करूं। यदि मेरा जीवन धर्म को अर्पण हो तो मेरे जैसी बड़भागी कौन होगी?"

शाम सिंह जैसे शेर की आंखों मे जल भर आया और सिर से पैर तक थर्रा गया। फिर सोचकर बोला– "हमारा जीवन बहुत कठिन है। मुसीबतों का सदा सामना रहता है। विशेषकर आजकल तो तुम अपने इलाके में भी नहीं जा सकतीं। तुम इन दुखों में कैसे निर्वाह करोगी?"
सुरसती बोली– "निभाने वाला सतगुरू है। मैं सारे दु:ख झेलूंगी और अपने जन्म को सेवा से सफल बनाऊंगी।"

सरदार फिर कुछ सोचकर बोला– "तुम औरत नहीं देवी हो। धन्य तुम्हारा जन्म है, जिसे धर्म से इतना प्यार है। बीबी बहन। तुम्हारी

कामना करतार पूरी करे। मेरी ओर से खुली छुट्टी है। तुम जैसे चाहो पंथ की सेवा करो, अपना जन्म सफल कर लो। पर मर्द बन जाओ तभी निभ सकोगी।''

बलवन्त सिंह– ''बहन! शाबाश तुम्हें, तुम पर गुरूजी की कृपा है। सचमुच गुरूजी की पुत्री हो। तुम्हारा हौंसला शेरों जैसा है। करतार तुम्हारी सहायता करे, माई भागो का हाथ तुम्हारे सिर पर हो।''

सुरसती– ''वीरजी, यह देह नश्वर है, अन्त में नष्ट हो ही जायेगी फिर यदि पंथ की सेवा में समाप्त हो तो इससे बढ़कर क्या चाहिये? कैसे हमारे सत्गुरू जी के साहिबज़ादों ने अपने प्राण न्यौछावर किये हैं और कैसे हंसकर भाई मनी सिंह जी ने शरीर के अंग-अंग कटवाये। वीर जी ऐसे महात्मा कुर्बान हो रहे हैं तो हम अपनी जान को किस दिन के लिये सम्भाल रखें? मां-बाप, सगे-सम्बन्धियों को मैं प्रत्यक्ष देख आई हूं कि उनका मोह झूठा है। आपने जो जलती चिता से मुझे बचा लिया है और अपनी जान को कष्टों में डाला है, यह आपने साधारण भाइयों की तरह नहीं किया। आपके हृदय में धर्म था, आपके मन में गुरू की प्रीति थी, आपके अन्दर ग़ैरत थी, इस कारण आपने मुझ पर इतनी दया की। अब जब मैं सोचती हूं कि धर्म इतनी पवित्र वस्तु है कि इससे जो काम होता है वह दृढ़ और सच्चा और अटल होता है। फिर मैं इससे क्यों मुंह मोड़ूं? आपके मन में यह संशय होगा कि औरत जैसा शरीर होने के कारण वह निर्बल होती है, उसी तरह मन के कारण भी निर्बल है। पर इस संशय को भी दूर कर दीजिए। औरत का मन मोम जैसा नर्म और पत्थर जैसा कठोर होता है। और धर्म की धार जब औरत के मन पर चढ़ती है तो वह ऐसी दृढ़ हो जाती है कि उसे कोई हिला नहीं सकता। मैं यह बात शेखी मारकर नहीं कहती। मैं पूरी तरह सतगुरू की कृपा पर भरोसा रखकर कह रही हूं।''

यह सुनकर शाम सिंह और बलवन्त सिंह ने बहन को शबाशी दी। अब अबेर हो गई थी। सभी पाठ करके सो गये।

सभी प्रातः काल उठा करते थे। ऋतु भी बसन्त की थी। उस जंगल में ईश्वर के नाम की महिमा ने वह रस बरसाया कि वैकुण्ठ दिखने लगा। सुबह होते ही गुरू ग्रंथ साहब का प्रकाश हुआ और संगत आ जुड़ी। पहले शाम सिंह ने संगत को बताया कि बहन सुरसती का संकल्प अपना जन्म धर्म के हित व्यतीत करने का है। वह घर-बाहर सुलह-जंग, हर जगह भाइयों की सेवा करना चाहती है। इस कारण इन्हें अमृत छकाकर संगत में शामिल करते हैं और अपनी धर्म बहन बनाते हैं। सभी लोग इन्हें माता साहिब देवा जी और पिता गुरू गोबिन्द सिंह जी की पुत्री समझें और इनसे बहनों जैसा व्यवहार करें फिर उसे अमृत छकाया गया और श्री गुरू ग्रंथ साहिब जी में से नाम 'सुंदर कौर' रखा गया जो 'सुंदरी' होकर प्रसिद्ध हुआ।

खालसा जी की खुशियों की हद कहां थी? आज वह दिन है कि अपनी एक बहन को शेर के पंजों में से निकालकर ले आये हैं और आज धर्म की जगवेदी पर अपना बलिदान देने जा रही है। अब वह दल में रहकर सारी उम्र सेवा करेगी और भाईयों के दुःख बंटायेगी। सारी फौज में कौन सा पुरूष था जिसके सिर पर से औरत की कोमल प्रेममयी तथा दयावान छाया नहीं उठ चुकी थी। कौन था जो माता, बहन या पत्नी के पवित्र सम्बन्धों से धर्म के लिये बिछुड़ नहीं चुका था और मुद्दतों से खुरदरा फौजी जीवन व्यतीत नहीं कर रहा था?

(6)

बत्तीस दांतों में जैसे एक नम्र व कोमल जीभ बसती है जो अपनी प्रेममयी तथा मीठी सेवा से दांतों को सुख देती है और दांत भी उसे कष्ट नहीं पहुंचाते, वरन् उसकी रक्षा करते है ऐसे ही सरदार शाम सिंह के जत्थे के बहादुर सिंहों में नम्रता तथा मिठास की पुतली सुंदरी का निर्वाह होने लगा। दोनों वक्त सुंदरी लंगर में लगी रहती, भोजन तैयार करती, कुछ सिंह साथ में सहायता करते। जब सभी लोग छक लेते तब और सेवा में ही हाथ-पांव मारती, भजन-वाणी भी नियमानुसार

करती। जब लंगर मस्ताना (समाप्त) हो जाता, अन्न-दाने की कमी हो जाती तब खालसा जी वन के फल और मीठी जड़ों पर गुजारा करते। इस सेवा में भी सुंदरी कुशल हो गई थी। समय मिलते ही वह सारे वन में घूमती फिरती और खाने वाले फलदार वृक्षों को नज़र में रखती, जरूरत पड़ने पर उनसे फल ले आती। वन की उत्तर दिशा में एक पहाड़ी का टीला था। सुंदरी एक दिन उस पर चढ़ गई और जब कोस भर उतराई-उतर गई तब वहां एक छोटा सा गांव दिखा जिसके आस पास हरे-भरे खेत लहलहा रहे थे। गांव में जाकर उसने कुछ मझोले कद के पर तगड़े लोग देखे। वे सभी खेती करते थे और थे भी हिन्दू। यहां से सब्ज़ियां और नमक-मिर्च आदि मिल जाता था। कई बार सुंदरी यहां तक चक्कर लगा जाती और कई छोटे-मोटे सौदे भी ले जाती, पर किसी को पता न लगता कि यह देवी कहां से आती है और किधर चली जाती है।

एक बार खालसे का लंगर मस्ताना हो गया। फल, जड़ें आदि खाते-खाते जी भर गये और खजाना भी खाली हो गया। सारी फौज इसी सोच-विचार में थी कि क्या किया जाय? सुंदरी के पास एक अंगूठी थी जो उसके विवाह के समय से आज तक उसके हाथ में थी, जिसमें हीरे की कणी जड़ी हुई थी। इसे बेचकर कुछ अन्न पानी खरीदने का संकल्प कर सुंदरी उस गांव में गई। पर उस गांव में हीरे की जांच किसे मालूम थी? एक-दो बनिये देख चुके। पर सच झूठ की परख किसी को न हुई। निराश होकर लौट रही थी कि बाज़ार की नुक्कड़ पर एक सफ़ेदपोश खत्री-बच्चा उदास बैठा था। सुंदरी की सुन्दरता और उसके चांद जैसे चेहरे पर उदासी की बदली देखकर खत्री से न रहा गया। बोला-बीबी तुम कौन हो, और उदास क्यों हो?

सुंदरी बोली मैं उदास इस कारण हूं कि मेरी हीरे की अंगूठी का ग्राहक कोई नहीं मिल पा रहा।''

खत्री बोला– "अंगूठी मुझे दिखाओ तो!"

सुंदरी ने अंगूठी दिखा दी।

खत्री ने कहा– "अंगूठी तो अच्छी है, नग भी सच्चा है। कीमत भी पांच सात सौ मिल सकती है, पर दु:ख इस बात का है कि मैं आम के वृक्ष से दूर गिरी हुई पंख टूटी कोयल की तरह हूं। धन–सम्पदा पास नहीं, नहीं तो मैं इसकी पूरी कीमत देता।" फिर वह ठण्डी सांस कर आंसू भर लाया और सुंदरी को अंगूठी वापस देते हुए बोला 'बीबी, शिवजी तुम्हारी कामना पूरी करें पर यदि तुम यह अंगूठी लेकर किसी शहर में जाओ तो अच्छी कीमत मिल जाएगी।"

सुंदरी ने कहा– "बहुत अच्छा, जो गुरू जी को भाये। पर आप यह बताएं कि मर्द होकर आप क्यों रो पड़े? आंसू तो औरतों के गिरते हैं। मर्द तो कभी भी आंसू नहीं गिराता।"

खत्री बोला– "बीबी, तुम औरत और मैं शक्तिहीन मर्द। न तुम मेरा दु:ख निवृत्त कर सकती हो, न मैं तुम्हारी जरूरत पूरी कर सकता हूं। फिर क्या बताऊँ? अपने रास्ते जाओ और घर में आनन्द भोगो। भले ही तुम्हारे अंगूठी बेचने से लगता है कि तुम भी दु:खी हो और इन वनों के सहारे मुगल हाकिमों के जुल्म से सिर छिपाये बैठी हो, शहरों एवं गांवों का आवास तो अब नर्क हो गया है।"

सुंदरी बोली– "हे परमात्मा के बन्दे! मैं परम सुखी हूं। शरीर के कारण अबला मुझे कह लो पर मैं मन से बहुत ही शक्तिशाली हूं। मेरे कबीले वाले शक्तिशाली हैं कि जिनका लोहा अब तुर्क भी मानते हैं।"

खत्री ने पूछा– "तुर्कों के मुकाबले का कौन है? सिख बेचारे उठे थे, कहीं–कहीं उन्होंने उनके अच्छे दांत खट्टे किये थे। पर नाश हो हमारे अपने ही भाइयों का, जो सिखों की भी खोज खबर देकर उन्हें बरबाद कर रहे हैं। पर कैसे वे मरते–खपते फिर विकसित होकर धर्म पर जानें न्यौछावर करते रहते हैं। अब देखो ना, लखपत राय

एमनाबाद से सिखों पर मुसीबत खड़ी करने आ रहा है। ओ–हो! महादेव भोले! यह क्या हो रहा है?''

'सिखों के सिर मुसीबत' सुनकर सुंदरी का चेहरा लाल हो गया पर फिर सोचकर सम्भली और ज़बरदस्ती इकट्ठे किये धैर्य के साथ बोली–''आप अपना हाल तो सुनाइए।''

खत्री बोला– 'हे देवी! यदि तुम्हारी हठ है तो लो सुनो मेरी दुख भरी कहानी–इस जगह से दस–बीस कोस ढलाव की ओर राजसी मार्ग से ज़रा दूर हटकर एक गांव है। इसमें हिन्दुओं के घर भी काफी हैं। एक सुन्दर शिवालय भी है। हमारा घराना काफी पुरातन है। अकबर के समय दीवान टोडरमल के मातहत हमारे पूर्वज भी किसी ओहदे पर थे। धन–दौलत इतनी है कि आजतक ख़त्म नहीं हुई। जाति के हम ऊंचे खत्री हैं। हमारे नगर में एक हाकिम और उसके सिपाही रहते हैं। कुछ दिन हुए मैं शिवालय में जल चढ़ाने गया था। पीछे मेरी पत्नी छत पर खड़ी बाल सुखा रही थी मुगल हाकिम का महल हमसे ज़रा सा ऊँचा है। छत पर से उसने मेरी पत्नी देख ली। उसी समय उसने पता लगाया कि यह अमुक की पत्नी है। बस मुझे शिवालय में से निकलते ही पकड़वाकर मंगवाया और कहने लगा कि–'बादशाह सलामत को पता लगा है कि तुम्हारे घर में अकबर के ख़ज़ाने के ज़वाहरात हैं। उन्हें दे दो तो ठीक है नहीं तो कैद हो जाओगे।' मैंने कहा कि 'अकबर को मरे पीढ़ियां बीत गईं। मेरी भी पीढ़ियां मर चुकी हैं। इस बात का कोई सबूत नहीं। वह बोला–''ओ काफ़िर' मोमिनों के सामने झूठ बोलता है? चल दूर हो।' यह कहकर उसने आंख से इशारा किया। झट सिपाही मुझे बन्दीगृह में ले गये। उधर मेरे घर पर पहरा बैठा दिया। दूसरे दिन मुझे कहला भेजा कि 'यदि तुम अपनी पत्नी दे दो तो तुम्हें छोड़ दिया जाएगा।' यह बात सुनकर मैं बेहोश हो गया 'हाय! मेरी प्यारी पत्नी मुझसे, छिनकर दूसरे की बन जायेगी।'

जब मुझे होश आया तो मैं सोने के कड़े और अंगूठियां, जो मेरे पास थीं दारोगा को रिश्वत में देकर छुटकारा पाकर घर की ओर गया। पर मेरी पत्नी को वह पहले ही पकड़कर ले गया था और मेरे घर पर पहरा बिठाया हुआ था। यह जानकर मैं पागल सा हो गया। पर मैं कर भी क्या सकता था। गांव से बाहर जाकर दो दिन रोते हुए बिताये, बाद में किसी तरीके से ख़बर मंगवाई कि मेरी पत्नी ने अभी धर्म नहीं हारा पर कैद में पड़ी हुई है। एक दिन और छिप-छिपाकर काटा। पत्नी को बचा पाने का कोई उपाय न देखकर मैं इधर निकल आया हूं कि किसी तरह मर जाऊं। पर जान पापिन बहुत प्यारी है।''

सुंदरी बोली- ''ओ आपदा ग्रस्त सज्जन! आत्महत्या करना महापाप है और यदि तुम पत्नी का छुटकारा चाहते हो तो मेरे साथ चलो। मेरे भाई तुम्हारी पत्नी तुम्हें वापस ला देंगे। यदि तुमने पत्नी के तुर्क हो जाने की पक्की खबर पाई है और अब अगर उससे मिलना नहीं चाहते तो मेरे भाई तुम्हें धर्म के काम में लगा देंगे-ऐसा कि तुम्हारा जीवन सफल हो जाएगा।''

खत्री बोला- ''बहन! तुम्हारे वचन इतने कोमल और मीठे हैं कि मेरे घायल मन पर मरहम का काम करते हैं।'' 'डूबते को तिनके का सहारा' कोई ढंग मेरे पास अपने बचाव का नहीं रहा। कोई रास्ता पत्नी के छुटकारे का नहीं, चारों ओर अंधेरा छाया हुआ है। विपत्ति की मूर्तियां पत्ते-पत्ते पर छाप दी गयी हैं। वह कौन सा पाप है जिस कारण हमारे देश मे ऐसा कहर हो रहा है? क्यों हमारे देश पर ऐसी विपत्ति आई हुई है। देवी-देवता किधर जा छिपे हैं? ऋषि-मुनि क्यो नहीं आते?''

मन का दु:ख और अंत: करण की वेदना और निराशा सुनकर सुंदरी का कलेजा कांप उठा। धैर्य के साथ बोली-''हे परमात्मा के बन्दे! यह सब कष्ट एक परमेश्वर की सेवा छोड़कर व्यर्थ कर्म करने का फल हैं। एक परमेश्वर का पल्ला पकड़ने से सभी काम सिद्ध होते हैं। एक का सहारा लेने वाले आपस में प्रेम में पिरोए जाते हैं। एक के

पुत्र आपस में भाई होते हैं। भाईपने के भाव के साथ जुड़े हुए लोग एक शक्ति बन जाते हैं। बिखरे रहना हमारे देश की कमजोरी का कारण है। हमारा आपस में फटे रहना एक बुरा कर्म है जिसकी सज़ा हम भुगत रहे हैं।

खत्री अपने विचार प्रवाह में डूबा मूर्ति बना बैठा था। सुंदरी ने उसे बांह से पकड़कर उठाया और साथ ले चली। जब गांव से दूर निकल गई तब कहने लगी कि आजकल का समय बुरा है और हम लोग छिप–छिपाकर गुज़ारा कर रहे हैं। इस कारण किसी को भी अपना पता नहीं बता सकते। तुम्हारी आंखों पर मैं पट्टी बांध देती हूं। ठिकाने पर चलकर खोल दूंगी। खत्री ने नानुकुर कुछ न की। सुंदरी ने पट्टी बांध दी और जंगल के टीले रास्ते लांघकर अपने डेरे में उसे ले पहुंची।

डेरे पर पहुँचकर उसने देखा कि जंगल में मंगल हो रहा है। देगें गर्म हैं। अग्नि लटलट कर जल रही है। हैरान होकर उसने एक सिंह से पूछा– ''भाई साहब, यह क्या है?'' उसने उत्तर दिया–''बहन जी, यह महाप्रसाद है। आज लंगर मस्ताना होने के कारण सरदार जी और बलवन्त सिंह जी शिकार पर गये थे। वे कई हिरण मार लाए हैं। उनकी देगें रख दी गई हैं। आपने आज बहुत देर लगाई, किधर गई थी।''

सुंदरी हंसकर बोली– ''भाई साहब! बहुत दिन से खाली बैठे थे, आपके लिए काम खोजने गई थी।''

उसने पूछा– ''कोई काम लाई हो।''

सुंदरी ने खत्री की ओर संकेत करके कहा–''यह देखो!''

इतने में बलवन्त सिंह आ गया। बहन से पूछने लगा कि यह कौन है? सुंदरी ने सारी बात सुनाई। फिर दोनों सरदार के पास गये। खत्री को भी ले गये। सारा हाल सुनाकर शाम सिंह के हृदय पर एक आश्चर्यजनक असर हुआ। सुंदरी के हृदय में धर्म का इतना प्रेम देखकर कि वह भाइयों के लिये अपनी अंगूठी बेचने उठ चली, सरदार एक चाव और प्रशंसा के भाव से भर गया। फिर बोला–'' बहन तुम सचमुच

देवी हो।'' फिर खत्री की व्यथा पर विचार कर एक सिख को आज्ञा दी कि इसे लंगर में ले जाओ और इसकी पट्टी खोलकर कुछ खाने के लिए दो फिर बलवन्त सिंह के साथ विचार-विमर्श हुआ कि यह कहीं दुश्मनों में से भेद लेने न आया हो। इसका विश्वास करना उचित नहीं और एक सिख को आज्ञा दी हर वक्त उसके साथ रहे तथा ख्याल रखे कि वह क्या कुछ करता है और किधार आता जाता है। एक अन्य सिख जिसे पहले भी खबर लेने के लिए भेजा गया उसे गांव भेज दिया कि खबर लाये कि जो कुछ खत्री ने कहा है, ठीक है या नहीं? सुंदरी को अपनी कैद भूली नहीं थी और वह जानती थी कि खत्री की पत्नी कितनी कठिनाई में होगी और किस प्रकार अपने छुटकारे के लिये उद्विग्न होगी। वह चाहती थी कि उस औरत के धर्म को बचाने के लिए जितनी जल्दी की जाए उतना ही अच्छा है। पर सरदार की सावधानी और सतर्कता भी आवश्यक थी।

(7)

उपरोक्त समाचार को तीन दिन बीत गये। सुबह हो चुकी। दस बारह बजे का वक्त है। उस नगर में जहां उस खत्री की पत्नी कैद थी सभी लोग अपने-अपने कामों में व्यस्त हैं। छोटे से नगर में दूकानों पर लेन-देन हो रहा है, घरों में खाना तैयार हो रहा है। हाकिम के महल में खूब धूम-धाम है। दीवानखाने में हाकिम साहब बैठे हैं। पास ही कुछ मुसाहिब बैठे गप्पें मार रहे हैं। शराब का दौर जारी है। भांति-भांति के खाने पड़े हैं, कोई प्याला मुंह से लगाये बैठा है, कोई खाना उड़ा रहा है।

ज़नानखाने में भी गहमा-गहमी है, एक गलीचे पर पांच-छह बेगमें बैठी हैं, इधर-उधर गोलियां-बांदियां फिर रही हैं। इन बेगमों की सुन्दरता-एक से एक बढ़कर है, रेशमी कपड़ों और जेवरों की सजधज बहुत सुंदर है। इनमें से एक औरत बेहद उदास बैठी है। उस कमरे की अमीरी सजावट उसके शरीर के कपड़े और अमूल्य गहने

यूं लगते हैं जैसे एक नई पकड़ी मैना को सोने के पिंजरे में डाल दिया गया हो। और सभी बातें कर रही हैं, हंसती हैं, कुछ हंसी–मज़ाक भी करती हैं पर यह चुपचाप बैठी है। किसी–किसी वक्त ठण्डी सांस भरती है, कभी आंखों में से आंसू गिर पड़ते हैं। साथ वाली बुलाती है, पर यह सिर ही नहीं उठाती। एक औरत ने फारसी में कहा–'यह नई चिड़िया है अपने आप ही रम जाएगी।'

इतने में खाने की ख़बर आई, वहां ही दस्तखान बिछाया गया। ऊपर भांति–भांति के खाने रखे गये, सब 'बिसमिल्ला' कहकर खाने लगीं। यह चुप बैठी है। यदि वे खाने के लिये तंग करती हैं तो यह त्रुप–त्रुप आंसु गिराती है और धीमे से कह उठती है–'हे शिव संहार करो!' जब बेग़मों ने बहुत तंग किया तब तो फूट–फूट कर रोई–सिसकियों की आवाज़ दूर तक पहुंचने लगी सब औरतें गुस्से से भर गई कि इसने हमारा खाना हराम कर दिया है। वे इसे हाथों–हाथ पीटने को तैयार थीं पर एक औरत को कुछ रहम आया। बोली–'बहनो, यह इसके बस में नहीं। जब मुझे पकड़कर लाया गया था तब मेरा इससे भी बुरा हाल था। धीरे–धीरे यह खुद ही घुलमिल जायेगी।'' वे सभी कुछ टलीं तो सही पर यह कहने लगीं कि इसे कुछ खिलाना जरूर है। उसकी मनुहार करती रहीं पर इसने एक न मानी, बाद में इन्होंने मिलकर उसे लेटाया और मांस की तरी उसके मुंह में डालने लगी ही थीं कि इतने में हाकिम साहब जो नीचे शराब पी रहे थे मस्त हुए ऊपर आ गये, और यह हाल देखकर समझे कि ये सभी इसे द्वेष के कारण पीट रही हैं। यह सोचकर दो–दो धौल सभी के सिर पर मारकर उस बेचारी को बाजू से पकड़कर बाहर छज्जे पर ले गये और नशे में मस्त होकर लगे ऊल–जलूल बातें करने। इस समय उस औरत को निश्चय हो गया कि अब धर्म बचाने का कोई रास्ता नहीं रहा। अब प्राण त्यागने ही उचित हैं। उसने सोचा कि खिड़की के पास खड़ी हूं, छलांग लगा दूं। पर हाय! दुखिया से मौत भी डरती है। इसकी बेरूखी, उदासी और निराशा से शराबी नवाब को भी गुस्सा चढ़ गया। उसने उसे कलाई से बहुत ज़ोर से पकड़ा और

लाल-लाल आंखें करके पता नहीं क्या बोलने लगा था कि उसकी आवाज़ यूं निकली, धै-धै-धै-धै-धै-धै-।

अरे, यह क्या हो गया? नवाब जी क्या कहने जा रहे थे? गले को क्या हो गया? हां, नवाब साहब को किसी तगड़े हाथ ने गर्दन से पकड़ लिया और जो कहने जा रहे थे, गले में ही रह गया। अब इस समय नगर में से एक तेज़ ऊची 'धनाऊ' करती आवाज़ जैसे घमासान युद्ध की होती है, आ रही थी। क्षण मात्र में पांच-सात और व्यक्ति ऊपर चढ़ आये। नवाब साहब पकड़े गये। बेगमें पत्थर की मूर्तियां बन गईं। गोलियां दौड़ भागकर दूसरे रास्ते से बाहर हुईं। वह दुखी औरत अविश्वास के साथ यही कहे जा रही थी-'जैसी राखी द्रौपदी की लाज! पल भर में ही एक औरत और एक हिन्दू नीचे से आये। हिन्दू को देखते ही वह औरत खिल उठी, वह भी आगे बढ़ा, पर औरत ने तुरन्त कहा-"महाराज, मुझसे ज़रा दूर रहो, मैं हिन्दू धर्म गंवा बैठी हूं।" यह बात सुनकर वह औरत जो हिन्दु के साथ थी बढ़कर बोली-"क्या पतिव्रता धर्म हार बैठी हो?" उसने उत्तर दिया-"नहीं जी, मैं अपने शील धर्म में तो दृढ़ हूं पर मुझे जबरदस्ती तुर्क खाना खिला दिया गया है।" यह सुनकर वह औरत जो हमारी बहादुर बहन सुंदरी थी, बोली-"प्यारी बहन, धन्य हो तुम, जिसने इतने कष्टों में भी अपना जत-सत पक्का रखा है।"

एक-आध सिख ने बेग़मों से गहने लेने की बात सोची, पर बलवन्त सिंह ने तुरन्त रोक दिया और कहा-"औरत पर जुल्म करना खालसे का धर्म नहीं। भाई की यह शलीनता देखकर सुंदरी बाग-बाग हो गई।*

---

* अपने जंगनामे में काज़ी नूर मोहम्मद इस समय के सिखों के विषय मे लिखता है-
'जरो ज़ेवरे ज़न ब-ताराज नीज़ नगीरन्द भर मिहरा हस्त पर कनीज़।'
अर्थात् - चाहे औरत लौंडी हो या सुंदरी, उसके
धन और गहनों को सिख नहीं लूटते।

29 : सुंदरी

पलक झपकते नवाब की मुश्के कसकर सभी लोग नीचे उतरे। उधर सरदार शाम सिंह ने सारा खज़ाना घोड़ों पर लदवा दिया। खालसे कीफौज सारे नगर में अत्याचारी और पापी मुगलों से हिन्दुओं के बदले ले रहे थी। जिस-जिस मज़लूम हिन्दू ने और कई ग़रीब मुसलमानों ने भी अपने दुख बताए खालसे ने उसकी सहायता करके जबरदस्ती करने वाले की खूब खबर ली। हाकिम की जो थोड़ी फौज थी, वह गढ़ी में थी, वह जो सिखों ने पहले ही बाहर से बन्द करके घेर ली थी। ख़ालसा सेना ने इस फुर्ती के साथ हमला किया कि सारे शहर में किसी के दिलो-दिमाग़ में भी नहीं आया कि कोई बिजली की चमक बिन बादल ही आ पड़ने वाली है। यही खालसे की उस समय की कुशलता थी कि वे अत्यन्त फुर्तीले और कमाल के निशाने बाज बन्दूकची थे।* दुखी खत्री की पत्नी और नवाब को काबू कर सरदार शाम सिंह तथा बलवन्त सिंह खत्री के घर पहुंचे। वे चबूतरे पर दरी बिछाकर बैठ गये। सारी सेना नगर से बाहर इकट्ठी हो रही थी। दस-बीस जवान सरदार के साथ भी थे, सुंदरी भी और वह औरत भी जिसका हम हाल बताते आये हैं, पास आ बैठी। सरदार साहब ने हुक्म दिया कि गांव के सारे

---

* काज़ी नूर मोहम्मद लिखता है-

'तूं गोई कि हस्त ई तुफंग अजकदीम
ज़ि हिकमत सगां नै जि लुकमा हकीम।
अंजेशां ज़िआदह दरीं। फन कसे
नदां नंद तुफ़ंगीएस्त गर चिह बसे।
यसीनो यसारो पसो पेश हम,
बदो मे जंनद सद तुफंग ओं बदम।'

अर्थात - तू कहेगा कि बन्दूक (का फन) शुरू से है, (पर नहीं इस फन का प्रारम्भ) लुकमान हकीम से नहीं है यह फन सिखों से ही (मानो चला है) भाव-सिख ही इस फन के शुरू करने वाले उस्ताद है) भले ही (सिपाही) तो बहुतेरे हैं, परन्तु इनसे अधिक इस फन को कोई नहीं जानता। दायें-बायें आगे से पीछे से ये सैंकड़ों निशाने मारते हैं।

ब्राह्मणों को बुलाओ। दो सिंह यह काम करने चले गये। खत्री अपने घर मे जाकर देख रहा था कि सारा माल-मत्ता लूटा गया है या नहीं। पर उसके भाग्य को एक कौड़ी का भी नुकसान नहीं हुआ था।

इतनी देर में एक बुढ़िया औरत लाठी टेकती और आंखों से आंसू बहाती आई और और बुढ़ापे के कारण ढीली पड़ी आवाज़ में बोली-"हे सिंह सूरमे! तुम्हारा जुग-जुग तक राज रहे। तुम तो कोई परमात्मा के अवतार हो। मेरी छाती में ठण्डक डाल दो। परमात्मा तुम्हें इससे चौगुना करे।"

सुंदरी का मन यह दुहाई सुनकर द्रवित हो गया। वह बोली-"माई क्या है?"

माई बोली- "बच्ची, क्या बताऊं? यह जो हाकिम बैठा है। इस वक्त चोर की भांति बंधा हुआ है, इसने मेरे साथ बहुत अनर्थ किया है। मेरा इकलौता ही बेटा था जिसे मैंने बहुत लाड और मिन्नत करके पाला-पोसा था। एक दिन दुर्भाग्य से वह इसके महल के नीचे से निकलता हुआ गर्दन ऊंची करके खिड़की की ओर देख बैठा। उस समय खिड़की में राख-मिट्टी भी नहीं थी। पर इस नवाब को गुस्सा आ गया। मेरे बेटे को इसने इतना पिटवाया कि वह मर ही गया। मैंने बहुत मिन्नत कीं, पर इस पत्थर दिल ने एक भी न सुनी। हे परमात्मा के भेजे हुए बंदे! मेरा न्याय कर।"

यह बात सुनकर हाकिम के चेहरे पर कूरता का रंग फिर गया। सभी सिंहों के हृदय द्रवित हो गये। शाम सिंह ने कुछ देर सोचकर पांच-सात मोहल्ले वालों से पूछा कि क्या यह बुढ़िया सच कह रही है? सभी ने उसकी हामी भरी।

कुछ क्षण बाद एक जवान मुसलमान औरत एक बच्चा गोद में और दो उंगलियों से पकड़े हुए आई। बच्चों के कपड़े फटे हुए थे और वे भूख से बिलख रहे थे। इसे देखकर शाम सिंह ने पूछा-"बीबी, तुम कैसे आई हो? उसने उत्तर दिया कि तुम्हें परमात्मा की ओर से भेजा

गया समझकर न्याय करवाने आई हूं। मेरा घरवाला इस हाकिम का दरबारी था और हमारे घर दौलत की परवाह नहीं थी। एक दिन शराब के नशे में नवाब से झगड़ पड़ा, बस उसी वक्त उसे मरवा दिया गया और सारा घरबार लूटकर मुझे दर-दर की भिखारिन बना दिया। अब मेरे इन बच्चों के लिए घर में पाव भर अन्न नहीं रहा। मांगने पर भी भिक्षा नहीं मिलती, क्या करूं? मौत भी नहीं आती। तुम जुल्म करने वालों का सिर तोड़ना जानते हो, मुझ दुखयारी के लिये भी कुछ करो।''

यह बात सुनकर सिखों के मन में नवाब के प्रति अत्यधिक घृणा उत्पन्न हो गयी। उदासचित्त सरदार ने नवाब के खजाने में से एक थैली मंगवाई। उसे उस दुखिया की झोली में डालकर कहा-''तुम जाओ और खा-पीकर आराम करो।''

यह बात देखकर एक ब्राह्मण ने धीमे से कहा-''सरदार दूर की सोच नहीं करते। देखो मलेच्छनी को रूपये दे दिये हैं।'' यह बात सरदार ने सुन ली। वह बोला-'सुनो मिश्र जी, हमारा घर पक्षपाती नहीं है। न हमें किसी के साथ बैर है। हिन्दू-मुसलमान क्या हमारे सतगुरू को किसी के साथ भी वैर नहीं था। सारी सृष्टि हमारे लिये एक समान है। हमें तो अन्याय का नाश करना है। इस वक्त जो हाकिम जुल्म कर रहे हैं हमें उन्हें ठीक करना है। उन्हें ठीक करना जुल्म को ठीक करना है।

ब्राह्मण बोला- 'फिर आप तुर्कों को क्यो मारते हैं? उनकी शरण लीजिए।'' शाम सिंह ने कहा-''पंडित जी! हमारा तुर्कों के साथ या पठानों के साथ उनके मुसलमान होने के कारण कोई वैर नहीं और न ही वैर-विरोध में पड़कर हम उनका राज्य छीनना चाहते हैं। हमारा मुगलों के राज्य को नाश करने का अर्थ यह है कि वे बादशाह होकर प्रजा को दु:ख देते हैं। न्याय नहीं करते हैं, प्रजा की रक्षा नहीं करते हैं। धर्म में दख़ल देते हैं। ज़बरदस्ती धर्म नष्ट करते हैं। यह पाप है, राजा का धर्म यह नहीं है। इसलिये हम उनके जुल्म के राज्य का नाश कर

रहे हैं। किसी जाति या मत के साथ हमें कोई शत्रुता नहीं। हमारे सतगुरू धर्म फैलाने आये थे अतः हम उनके शब्दों पर पक्के हैं और सत्यधर्म के पीछे उन पुरूषों का नाश करते हैं जो अधर्म करते हैं और अकाल पुरूष की प्रजा को दुख देते हैं। आप देखिए यहां हाकिम अन्यायी और अत्याचारी हो गये हैं। न ही इन्हें ख़ोफ खुदा का है और न ही लाहौर या दिल्ली का कोई रौब रह गया है। दिल्ली स्वंय ढीली होती जा रही है, लाहौर भी रंग पलटता जा रहा है।''

यह उत्तर सुनते ही मिश्रजी चुप हो गये।

इतने में गांव के बचे खुचे ब्राह्मण और कई खत्री इकट्ठे हो गये थे। अब सरदार ने कहा, ''देखो, यह औरत पतिव्रत धर्म में कितनी पक्की है और परमेश्वर ने भी इसकी लाज रखी है। तुर्कों ने इसे जबरदस्ती अपने मजहब मे मिला लिया था। अब आप इस पर दया करके इसे अपने में मिला लिजिए जिससे हम विदा हों।''

''खत्री-ब्राह्मणों ने उत्तर दिया, ''यह कभी नहीं हो सकता। हिन्दू धर्म कच्चा धागा है यह झटपट टूट जाता है। आप जानते ही हैं कि टूटे फल भी कभी वापिस वृक्ष पर नहीं लगते।''

यह कठोर उत्तर सुनकर सुंदरी ने बड़े प्रेम से उन्हें समझाया कि इसका कोई कसूर नहीं था। बल्कि इसकी बहादुरी पर आप इसे शाबाशी दीजिए और बिछुड़े हुओं को गले लगा लीजिए। शरण में आये हुए को धक्का न दीजिए। शरण आये व्यक्ति को ठुकराना बहुत भारी पाप है। पर सुंदरी के कोमल वचनों का किसी पर कोई असर न हुआ। फिर बलवन्त सिंह और शेर सिंह ने समझाया पर उनके धर्म के जो भाव उनमें थे वे उनपर कायम रहे कि हमारा धर्म कच्चा धागा है। हिन्दू जन्म से ही होता है। किसी मर्यादा से कोई हिन्दू नहीं बन सकता। यह सिद्धान्त उनके अन्दर बंधा पड़ा था। हालात की मुश्किल देखकर भी वे अपने उस विचार से न बदले। यह कठोरता देख उस खत्री और उसकी पत्नी ने भी बहुत मिन्नत खुशामदें कीं पर किसी ने उनकी बात

न मानी। अब सरदार को गुस्सा चढ़ आया। उसने हुक्म दिया कि कड़ाह प्रसाद तैयार करो। तुरन्त ही कड़ाह प्रसाद तैयार हो गया। अरदास की गयी। उसने हुक्म दिया कि खत्री की पत्नी उस प्रसाद को बांटे और सभी उसे खायें। जो नहीं खायेगा वह मारा जाएगा। इस हुक्म के साथ सारे कांप उठे। सुंदरी का मन कांप उठा। उठकर खत्री को अलग ले जाकर समझाने लगी कि इन ब्राह्मणों को एक-एक मोहर देता जा, चरणों में नमन किये जा। फिर सारे खालेंगे। उसने इसी प्रकार किया। आगे-आगे खत्री मोहर देता जाता और पीछे-पीछे उसकी पत्नी कड़ाह प्रसाद बांटती जाती, फिर तो सभी ने खा लिया और आशीर्वाद दे देकर विदा हुए।

सरदार ने अब कूच का हुक्म दिया पर खत्री और उसकी पत्नी विनम्रता से बोले-''अब हम यहां नहीं रहेंगे। हमें अपने साथ ले चलिए। आपके बहादुरों की सेवा करेंगे। यहां हमारा मन हमेशा दबा हुआ रहेगा। आपके साथ का रंग लेकर यह तगड़ा हो जाएगा। दूसरे यहां तुर्क सिपाही आयेंगे और सभी का गुस्सा हम पर ही उतरेगा। आप अभी चले जाएंगे। इसलिये हमें भी अपने साथ ही ले चलिए। हम आप की सेवा करेंगे, जन्म सफल हो जाएगा। मेरा सारा धन भी साथ ले चलिए जो खालसे के काम आएगा।

कुछ विचार-विमर्श के बाद यह बात मान ली गयी। चलने से पहले सरदार ने उस गांव के पास के दो एक गावों के लोग इकट्ठे किये और कहा, ''यह हाकिम प्रजा पर बहुत जुल्म करता रहा है। किसानों से इसने अतिरिक्त लगान वसूल किया है, अनेक साहूकारों को लूट-खसोट कर इसने नंगा कर दिया है, बेगुनाहों को मरवाया, अनाथों को दुःख और कष्ट दिये और हाकिम होकर इसने कंटीली झाड़ी की तरह हरेक को कांटे चुभोए हैं। न्याय करने की जगह इसने शराब और विषय भोग में समय बिताया है और परमात्मा की प्रजा को-जो इसके हवाले थी-इसने निर्दयी लोगों की तरह दुःख दिया है। इस लिये इन सारे दोषों

के लिए दण्ड दिया जाता है।'' यह कहते ही दो भंगियों ने पापी के गले में रस्सा डालकर वृक्ष के साथ टांग दिया। इसकी लाश तड़पती देख क्या हिन्दू क्या मुसलमान सभी खुश हुए।

(8)

घने जंगल के हरियाले मैदान की 'जूह' में पहुंचकर पहले तो उस खत्री और उसकी पत्नी को अमृत छका कर सिंह सजाया गया। खत्री का नाम धर्म सिंह और उसकी पत्नी का नाम धर्म कौर रखा गया। यह खत्री पहले तो एकदम निर्बल और पीला-सा शहरी था। और इस बीच आए दुःखों से बुरी तरह मुर्झा गया था पर जब अपने संकल्प में सफल होकर खिल गया और वीर रस पूर्ण सत्संग के साथ उत्साह से भरपूर हो उठा। फिर अमृत छककर बहुत शक्तिशाली और शूरवीर हो गया। निड़र होकर वन में घूमना इसे विशेष तौर से अच्छा लगता था। इसकी पत्नी सुंदरी के साथ मिलकर लंगर की सेवा करती और गुरूवाणी को कंठस्थ करती।

एक दिन लंगर में नमक समाप्त हो गया। सुंदरी धर्म कौर के साथ उस पहाड़ी की ओर गई जिसके पार वह गांव में कई बार जाया करती थी। दोपहर का वक्त था। धूप अच्छी प्यारी-प्यारी लगती थी। सुंदरी हिरणी की तरह चौकड़ियां भरती हुई इस गांव में पहुँची। नमक, मसाला लेकर घर को लौटी। जब गांव से कुछ दूर निकल आई तो पगडण्डी से कुछ दूर से 'हाय-हाय' की आवाज़ आई। सुंदरी झिझक कर खड़ी हो गई। फिर वह आवाज़ की ओर चली। क्या देखती है कि घास पर एक जवान व्यक्ति लहूलुहान पड़ा है। आगे होकर सुंदरी ने उसे ध्यान से देखा उसके कन्धे पर तलवार का घाव लगा हुआ था और छोटे-छोटे घाव तो न जाने कितने ही थे। रक्त धारा प्रवाह बह रहा था, चेहरा एकदम पीला हो रहा था, मुर्दनी छाई हुई यह दशा देखकर माता साहिब देव की वीर पुत्री का मन थोड़ा भी नहीं घबराया। अपने दुपट्टे से टुकड़ा फाड़ कर उसके शरीर से रक्त पोंछा और धर्म कौर को कहा

कि कहीं से जल्दी पानी लाओ और स्वयं हिम्मत के साथ उसके घाव को उसकी पगड़ी से अच्छी तरह से बांधाा। इतने मे धर्म कौर अपने दुपट्टे को पानी में भिगोकर ले आई सुंदरी ने वह पानी उसके मुंह में डाला और उसके हाथ पैरों को पौंछा। अब उस व्यक्ति की बेहोशी कुछ दूर हुई। पहले तो उसके मुंह से 'हाय' निकली, पर बाद में उसने आंखें खोलीं।

घायल अपनी सेवा होती देखकर आश्चर्य चकित था कि इस कठिनाई के समय कौन आ पहुंचा है। कुछ बोलना चाहा पर बोल न पाने के कारण चुप ही रह गया। अब सुंदरी ने सोचा कि यदि यह व्यक्ति यहां पड़ा रहा तो मर जायेगा। यदि इसे गांव पहुंचाया तो मैं ही कहीं किसी मुश्किल में न पड़ जाऊं। यदि 'जूह' में ले चलूं तो ले जाना मुश्किल, दूसरे यह तुर्क है। सारे भाई मुझे पागल समझेंगे। फिर उसने धर्म कौर से सलाह की। बाद में यही विचार पक्का हुआ कि इसे जूह ले जाकर इसकी सेवा करें।

बहुत कठिनाई और कष्टों के साथ उन औरतों ने वह ऊबड़ खाबड़ रास्ता, उसके बोझ को उठाकर तय किया और जंगल के आधेक रास्ते में पहुंचकर थक गईं। फिर कितनी ही देर सांस लेती रहीं। बाद में दिन ढलने के समय वे ठिकाने पर पहुंचीं और पुराने बरगद के नीचे सूखा घास बिछा कर उसपर चादर डालकर उसे लेटा दिया और खाने की कोई चीज़ उसके मुंह में डाली।

सुंदरी ने यह बात अपने भाई बलवंत सिंह को बताई। फिर इसकी सूचना शाम सिंह को मिली, दोनों ने बहन के इस काम पर उसे समझाते हुए कहा कि दया करना हमारा धर्म तो है, पर समय इतना खराब है कि तुर्कों से हमें बहुत ही बचाव करना पड़ता है, क्योंकि वे हमारी जड़ें खोदने पर आमादा हैं। इसलिए जो हमारे शत्रु हैं उनसे भलाई की आशा नहीं रखनी चाहिए। यदि हम किसी अच्छी दशा में हों तो चिन्ता न करें, पर इस विपत्ति के समय अपने आपको बचाना सबसे मुख्य बात है।

सुंदरी ने कहा, "भाई साहब! अब तो भूल हो गई। भविष्य में जल्दबाज़ी नहीं करूंगी। अब तो मैं इसे ले आई हूं पर भविष्य में बहुत चौकस रहूंगी। यदि यह मर गया फिर तो कोई चिन्ता की बात ही नहीं किन्तू यदि बच गया तो आंखों पर पट्टी बांधकर कहीं दूर छोड़ आएंगे।"

भाइयों को आश्वस्त करके सुंदरी अपने काम में जुट गई। प्रतिदिन जब काम से फुर्सत पाती, उस बीमार की सेवा करती, उसके घावों पर तेल लगाकर पट्टी बांधती खाने को जो बनता देती। लगभग महीने भर की सेवा के बाद उस मुगल जवान के घाव अच्छे हुए और वह चलने-फिरने लग गया। वह सुंदरी का बहुत आभार मानता और उसके अहसानों को बहुत मीठे वचनों से दोगुना-चौगुना करके कहता परन्तु उसे बहुत आश्चर्य इस बात पर होता था कि सिख जो बहुत कड़े हैं वे दयावान भी बेहिसाब हैं। यह गुण केवल इन लोगों में ही है कि उन्होंने आग और पानी का मेल रखा है।

सरदार शाम सिंह ने दो-चार सिंह उसकी निगरानी करने के लिए छोड़ रखे थे कि कहीं निकल न जाए और रास्ता मालूम करके शत्रुओं को सूचना न दे दे। कुछ दिनों बाद तो वह भला चंगा हो गया। उसने अपने घर जाने के लिए छुट्टी मांगी। इस पर यही विचार हुआ कि इसकी आंखों पर पट्टी बांधकर एक सिख जंगल में से इसे निकालकर कहीं दूर छोड़ आये। सरदार शाम सिंह की आज्ञानुसार ऐसा ही किया गया। किन्तु सरदार जी ने मन में आशंका बनी रही।

(9)

कुछ दिनों बाद एक दिन सुंदरी शाम के पहर उस गांव से वन की और लौटकर आ रही थी। जब पहाड़ी का रास्ता चढ़कर पगडण्डी का रास्ता छोड़कर अपने निशाने वाले रास्ते की और मुड़ी तो एक आवाज आई-"बस खड़ी रहो!" यह सुनकर सुंदरी ने पीछे मुड़कर देखा तो चार हथियार बन्द तुर्क सिपाही दिखे जो वृक्ष की ओट में से निकल रहे थे। आश्चर्य चकित होकर वह देखने लगी कि ये कौन हैं। पलक

झपकते ही चारों लोग उसे घेरकर खड़े हो गये। सुंदरी का दाहिना हाथ भी इस समय उसके दुपटे के अन्दर छिपी हुई कटार पर कब्ज़ा कर चुका था। वह साहस के साथ बोली, "आप लोग कौन हैं, और क्या चाहते हैं?"

सिपाही– "सिखों का पता बता। वे कहां हैं?"

सुंदरी– "यह बात असंभव है।"

सिपाही– "नहीं तो तुम्हें बेइज्जत करेंगे।

सुंदरी– किस मर्द की ताकत है, कि मुझे हाथ भी लगा जाए?

सिपाही– जान से मार देंगे।

सुंदरी– कोई परवाह नहीं है।

सुंदरी ने ज़रा ऊंची नज़र की तो एक और सिपाही को अपनी ओर आते देखा। जब वह समीप पहुंचा तो सुंदरी ने तुरन्त पहचान लिया कि यह तो वही तुर्क है। जिसे मैं घायल स्थिति में इसी स्थान से उठा ले गयी थी और महीने भर तक सेवा करके इसे स्वस्थ किया था। वह मन ही मन प्रसन्न हुई कि वह उसे इनसे ज़रूर बचा लेगा और इस समय ज़रूर सहायता करेगा। उसने समीप पहुंच कर सलाम किया, सारे सिपाही परे हट गये। बहुत सम्मान से उसने कुशल–क्षेय पूछी। सुंदरी ने भी सत्कार के साथ उत्तर दिया और कहा, "ये लोग कौन हैं जो मेरे पीछे पड़ गये हैं और बहुत बेइज्जती के साथ बातें क्यों कर रहे हैं?"

तुर्क बोला – बीबी! तू नहीं जानती कि मैं कौन था और कौन नहीं। पहले मैं अपना परिचय दूं तब तुम्हें सारी बात आसानी से समझ में आ जाएगी। मैं उन नवाब साहब का नौकर हूं जो आपको अपने गांव से पकड़ लाए थे। मैं यहां उस दिन एक सिख से लड़ने के कारण घायल होकर मरने की राह देख रहा था, जिस दिन आप मुझे उठा ले गईं थीं। पहले तो मैंने कुछ न पहचाना पर पांच–छह दिनों बाद मैंने आपको पहचान लिया था। जब मैं आपकी कृपा से स्वस्थ होकर अपने घर पहुंचा तो मैंने नवाब को सारी बात बताई। सुनते ही वह मेरे गले पड़

गया कि उस जगह का पता बताऊं या आपको उसके पास ले जाऊं। उसने कहा–इस काम के लिए वह मुझे पांच हजार रूपये देगा, नहीं तो वह मुझे मार डालेगा। मैं कई दिन जंगलों में टक्करें मारता रहा पर मुझे आपके ठौर ठिकाने का कोई पता ना चला। बाद में मुझे ध्यान आया कि इस स्थान पर आप मुझे ले गयी थीं। मैंने सोचा कि कभी न कभी आप फिर यहां से गुज़रेंगी अतः इस जगह आ बैठा हूं। कई दिनों से मैं सिपाहियों के साथ यहां इसी ताड़ में बैठा हूं। शुक्र खुदा बन्द करीम का जिसने मेरी मुराद पूरी की अब मेरी अर्ज़ यह है कि आप इस जवानी और सुन्दरता पर कुछ दया करिए। आप कहां जंगलों में गये गुजरे सिखों के साथ उम्र बिता रही हैं। सुबह से शाम तक नौकरों की तरह सेवा करतीं हैं जिसका लाभ कुछ भी नहीं। संसार में सुख पाने की यही उम्र है बाद में कब सुख भोगोगी? अभी तो इतना बड़ा नवाब हाथ बांधे आपका गुलाम बनने को आतुर है। महलों में रहिए, शासन करिए, आनन्द भोगिए चलिए सवारी तैयार है।''

सुंदरी कुछ घबराई दिल भी धड़का पर धैर्य के साथ बोली, ''क्या मेरी सेवा का यही फल है? क्या नेकी का यही बदला होता है?''

तुर्क बोला, ''आपकी नेकी मेरे सिर माथे पर मैं आपके साथ कोई किसी प्रकार की बुराई नहीं कर रहा हूं। भिखारी से रानी बना रहा हूं, काफ़िर से मोमिन बना रहा हूं। काफिरों के साथ धोखा–धड़ी भी करना उचित है, लीजिए, अब जल्दी करिए देर हो रही है।''

सुंदरी बड़े गुस्से से बोली, ''तुम नमाज़ चाहे कभी भूल कर भी न पढ़ो, पर जुल्म करने के लिए दोष दीन–धर्म के माथे। अरे कृतघ्न पुरूष तुम्हारे ये लक्षण बहुत बुरे हैं। याद रखो, तुम या तुम्हारा मालिक अपनी मुराद कभी भी पूरी नहीं कर पाओगे, मैं सिंहनी हूं कोई कमीन औरत नहीं कि किसी लालच में फंस जाऊं, जान दे दूंगी पर धर्म नहीं छोड़ूंगी।''

तुर्क बोला, "तुम्हारी इस ज़िद को हम अच्छी तरह जानते हैं। अब तुम पक्का विश्वास रखो कि पहले की तरह कोई किसी प्रकार की रिआयत नहीं की जाएगी। यहां से शहर पहुंची नहीं कि महलों में दाखिल कर दी जाओगी।"

सुंदरी बोली, "बहुत अच्छा, पर यहां से मुझे ले जाने की शक्ति किस में है? ज़रा सोच समझ कर तो बात करो। मुझे रह-रहकर दुःख तो इस बात का हो रहा है कि तुम्हारा दिल बहुत कड़ा पत्थर है, जिसमें दया-धर्म लेशमात्र भी नहीं है। क्या तुम्हें मर्द होकर भी यह समझ में नहीं आता कि मैं किसके साथ जुल्म करने जा रहा हूं। लो, अब कान खोलकर सुन लो, अगर तो तुम मुझे छोड़ दो तब तो अल्लाह तुम्हारा भला करेगा, नहीं छोड़ोगे तो मैं अपने प्राणों पर खेल जाऊंगी। जो बात पसन्द हो, कर लो।" तुर्क बोला, "दोनों पसन्द नहीं। अपने मालिक की बेगम बनाऊंगा, बस यही बात पसन्द है।"

अभी यह बात उसके मुंह में ही थी कि एक सिपाही ने सुंदरी की दायीं बांह पकड़नी चाही। सुंदरी ने बिजली की तेजी से कटार निकालकर उसके सीने में भौंक दी। वह लहू-लुहान होकर ज़मीन पर गिर पड़ा।

यह घटना देख एक सिपाही ने पीछे से होकर सुंदरी का कटार वाला हाथ पकड़ लिया, दूसरे ने कमर में हाथ डालकर उठा लिया, तीसरे ने दूसरी बाजू पकड़ लीं वृक्षों की ओट में पीला-सा डोला पड़ा था और कहार खड़े थे। वह तुरन्त डोले में डाली गई, द्वार बन्द किये गये और बेचारी सुंदरी फिर से तुर्कों की बन्दी हो गई। क्षण मात्र में ये लोग डोले में उसे डाल कर नौ-दो ग्यारह हो गये।

(10)

सुंदरी जिस समय अपने प्यारे भाइयों में से निकलकर गांव की ओर गयी थी, उसके कुछ समय बाद ही सरदार शाम सिंह, बलवंत सिंह तथा अन्य प्रमुख व्यक्ति आपस में विचार कर रहे थे कि हम लोग जहां लुक-छिपकर रह रहे हैं, उस स्थान पर भी अब बचाव संभव नहीं

है। लाहौर के नवाब का कारिंदा दीवान लखपत राय सिखों का जानी–दुश्मन हो गया है और वह ढूंढ–ढूंढकर सिखों की हत्या करवा रहा है। उसी समय वहां बिजला सिंह आ पहुंचा उसने बताया कि मैं यह बताने आया हूं कि लखपत राय ने भयंकर अंधेरगर्दी मचा रखी है, कत्लेआम शुरू है, धर्म स्थानों का अनादर किया जा रहा है, पवित्र ग्रंथ की प्रतियों को जलाया जा रहा है। सारे देश में कोहराम मचा हुआ है। इसलिए सरदार जस्सा सिंह, सरदार हरी सिंह, सरदार सुक्खा सिंह और सभी प्रमुख सरदार इकट्ठे हो रहे हैं। लखपत राय रावी के घने जंगलों से सिखों को निकालने का प्रयत्न कर रहा है और खालसा सेना धीरे–धीरे पहाड़ों की ओर बढ़ रही है। आप भी उस ओर चल पड़िए। शत्रु की सेनाएं इस ओर भी सिखों की खोज में आ रही हैं।

यह बात सुनकर शाम सिंह ने कहा, "ठीक है! बलवंत सिंह अपने साथियों को बता दो कि यहां से चलने की तैयारी कर लें। अब तो सूरज डूबने वाला है। एक–आध दिन में सारी तैयारी कर लो और फिर तड़के तारों की छांव में कूच कर दिया जाए। हां भाई बिजला सिंह, इकट्ठे कहां होना है?"

"अभी तो काहनू वाण की झील के पास घने जंगल में जाना है।" बिजला सिंह ने कहा।

बलवंत सिंह ने पूछा, "हमें जंगलों के मार्ग से चलना है या देश के बीच से होकर जाना है?"

बिजला सिंह ने कहा, "देश के बीच से ही हमला मारते हुए निकल चलिए। इस ओर तुर्क अभी कुछ असावधान हैं।"

सत्य वचन कहकर बलवंत सिंह लंगर की ओर चला गया। वहां सुंदरी को न देखकर उसने उसके विषय में पूछा। धर्म कौर बोली कि लंगर के लिए कुछ चीजें खरीदने के लिए बहन पास के गांव गयी है। बलवंत सिंह को क्या मालूम था कि बहन किन मुसीबतों में फंस गयी है।

सभी लोगों ने रात का भोजन भी खा लिया पर सुंदरी का कुछ पता नहीं था। बलवंत सिंह ने सोचा वह अवश्य किसी विपत्ति में फंस गयी है। वह धर्म कौर और बीस शस्त्रधारी सवार लेकर गांव की ओर चल पड़ा। चढ़ाई–उतराई का ऊबड़–खाबड़ रास्ता बड़ी कठिनाई से पार करते हुए वे उस टीले पर चढ़े। वहां उन्हें पगडंडी पर एक लाश मिली। अच्छी तरह देख भाल करने पर एक कटार मिली जिसे बलवंत सिंह ने पहचान लिया कि यह तो सुंदरी की है। अब उसे पक्का निश्चय हो गया कि बहन किसी मुसीबत में फंस गयी है। वे वहां से तुरन्त उस गांव की ओर गये। बाजार के लोगों को इकट्ठा करके पूछा तो इतना पता लगा कि शाम को पांच–सात तुर्कों के पहरे में एक डोली इधर से निकली थी। यह सुनकर बलवंत सिंह ने चार कोस तक पीछा किया, पर कुछ पता न लगा।

(11)

एक फकीर चला आ रहा है। लंबा चोंगा है, पर चिथड़े भी लटक रहे हैं। मिट्टी का भिक्षा पात्र उसके हाथ में है और उसने खुली तहमद बांधा रखी है। उसके साथ एक टट्टू है जिस पर कभी वह चढ़ जाता है और कभी उतरकर पैदल चलने लगता है। वह कभी अरबी में कुछ गाने लगता है, कभी फारसी में। कभी हीर रांझे के टप्पे गाने लगता है तो कभी बाबा नानक के श्लोक। पर एक पंक्ति वह बड़े प्रेम से गाता है–

'मेरो सुंदरु कहहु मिलै कितु गली।'

वह नदी की ओर जा रहा था कि एक मुसलमान ने कहा, "सांई उधर न जानां नदी के दोनों किनारों पर सिखों ने अधिकार जमा रखा है। वहां से उनकी फौज पार हो रही है। उधर जाओगे तो कहीं ऐसा न हो कि गेहूं के साथ घुन की तरह पिस जाओ।

सांई बोला, "ये सिख बड़े मरदूर हैं। भला हम सांई बंदे कहां जाएं?"

वह बोला, ''साईं जी, यह नीचे वाली पगडंडी पकड़ लो। इससे तुम एक ऐसे ठिकाने पर पहुंच जाओगे जहां दो–चार मल्लाह छिपे बैठे हैं। वहां किसी नाव पर बैठकर पार हो जाना।

साईं ने पूछा, ''कोई और भी इस मार्ग से गया है?''

वह बोला, ''जी, अल्लाह के प्यारे, तुमसे कुछ पहले एक मुगल अपने कबीले के साथ यहां से गुजरा है।''

फकीर अपने टट्टू पर सवार होकर आगे चल पड़ा। कुछ दूर जाकर उसने देखा कि नदी के किनारे एक पूरी भरी बड़ी नाव खड़ी है। वह अल्लाह का वास्ता दे देकर मिन्नत करने लगा कि मुझे भी नाव पर बैठा लो। उस नाव में एक मुगल सरदार और एक डोली थी। कुछ घोड़े और नौकर–चाकर भी थे। उस अमीर ने साईं की कोई बात नहीं मानी। परन्तु नाव का मल्लाह फकीर से डर गया। आमतौर पर मल्लाहों में यह विश्वास था कि फकीर की बद्दुआ से नाव डूब जाती है। मल्लाह के कहने पर फकीर को नाव पर जगह मिल गयी। उसने अपना टट्टू भी एक कोने में खड़ा कर दिया। नाव चल पड़ी।

इस समय आकाश मे कहीं–कहीं बादल थे और हवा धीरे–धीरे चल रही थी। फकीर मस्ती में आकर कुरान शरीफ की आयतें गाने लगा। वह मस्ती में कभी–कभी यह पंक्ति भी गाता–

मेरो सुंदरु कहहु मिलै कितु गली

सचमुच इस समय नदी का प्रवाह, बादलों की मौज और हवा के झोंके और फ़कीर की मस्त लय ने एक जादू पैदा कर दिया। सभी लोग मस्त हो गये और फकीर पर बहुत प्रसन्न हुए। अमीर साहब भी सरूर में आकर सिर हिलाने लगे, पर डोली में बंद बेगम साहिबा को पता नहीं क्या हुआ कि उन्होंने अन्दर से ही बड़ी गहरी और दर्द भरी ऐसी ठंडी सांस ली कि फ़कीर मस्ती भूलकर चौंक उठे और लाहौल विला कूवत पुकार उठे। अमीर यह देखकर बोला, ''साईं ज़ी... खैरियत तो है? आप गाते रहिए। आखिरी टप्पा लय से जरा फिर सुनाइए।''

साईं ने फिर गाना शुरू कर दिया।

डोली के अन्दर से फिर ठंडी सांस लेने और कराहने की आवाज आयी।

अब फकीर सभी राग छोड़कर अमीर से बोला, "तुम काफिर हो. ..बीबी को तंग रखते हो। खुदा पाक का हुक्म अपनी औरत पर सख्ती करने का नहीं है।"

अमीर ने उसे समझाने की बहुत कोशिश की पर फकीर अपनी ही कहता गया। उसके कान डोली की तरफ थे और मुंह अमीर की तरफ। पल-पल में डोली में से सी-सी की दर्द भरी आवाज निकल रही थी। कुछ देर बाद फकीर अपनी आंखें बंद करके इस तरह बैठ गया जैसे योगी समाधि लगाकर बैठता है। फिर वह आंखें खोलकर बोला, "खान साहब, इस डोली में आपकी बीवी नहीं है, कोई गैर औरत है और उसके हाथ-पैर बंधे हुए हैं। यह मैंने अंदरूनी आंखों से देख लिया है।"

अमीर अचंभित रह गया और फकीर के पैर पकड़कर बोला, "फकीर साहब आप तो छिपे हुए लाल निकले।"

कुछ क्षण बाद तेज हवा चलने लगी। लहरों ने जोर मारा, नाव नीचे-ऊपर होने लगी। अब तो सभी लोग सांईं के पैर पकड़ने लग गये कि किसी तरह डूबती नैया को पार लगाइए।

सांईं जी बोले, "देखो, डोली में जो औरत है, उसके बंधन खोल दो, डोली से उसे निकाल लो और डोली को नदी में फेंक दो। मेरा टट्टू और अपना घोड़ा छोड़कर बाकी सभी भारी चीजें भी नदी में फेंक दो।

जान बड़ी प्यारी चीज है। एक पल में हुक्म की तामील हो गयी। डोली से निकली औरत की शक्ल देखकर फ़कीर बोला, "अल्लाह, यह तो बंदगी वाला चेहरा है। इसके बंधन खोलो...जल्दी करो।"

अब हवा भी कुछ मद्धिम पड़ी और नाव का भार भी कुछ हल्का हो गया। नाव धीरे-धीरे किनारे आ लगी। किनारे पहुंचकर एक खुले स्थान पर उतारा किया गया। अमीर ने चारों कहारों और सवारों को पास के गांव भेज दिया कि उधर से कोई और डोली ले आएं और घोड़ों का बन्दोबस्त करें। अमीर साहब एक दरी पर तकिए का सहारा लेकर बैठ गये। उन्होंने अपना कमरबंद खोलकर आगे रख लिया।

डोली से निकली औरत शोक समुद्र में डूबी बैठी थी। एक ओर फकीर बैठा गुनगुना रहा था।

कुछ देर बाद औरत बोली, ''सांई जी, आप खुदा के बंदे हैं...हमारा न्याय कीजिए।''

फकीर बोला, ''वाह...तुम अपनी बात हमें बताओ।''

उस स्त्री ने अपनी सारी व्यथा कह सुनाई कि यही अमीर एक वन में घायल पड़ा था, मैंने मां से अधिक इसकी एक महीने तक सेवा की। अब यह मुझे कैद कर ले जा रहा है।

अमीर उस स्त्री की बात सुन रहा था। उसने कहा, ''मैं इसकी सेवा का हक चुकाने जा रहा हूं। मैं इसे अपने मालिक की बेगम बनाकर इसे ऊंचे मरतबे पर पहुंचाना चाहता हूं।''

दोनों की बात सुनकर फकीर हंस पड़ा और बोला, ''हे बीबी, तू झूठी है और खान सच्चा है।''

यह बात उस स्त्री ने सुनी तो उसकी आंखों में खून भर आया। फकीर किसी सोच में डूब गया था। खान भी नींद की मस्ती में आ गया था। इतने में उस शेरनी ने क्रोध की आग में भड़ककर बड़ी तेजी से उठकर खान के कमरबंद की तलवार, जो उसके सामने रखी हुई थी, म्यान से निकाल ली और तानकर इस तरह खड़ी हो गयी मानो दुर्गा दैत्यों का संहार करने के लिए आ खड़ी हुई हो। खान हक्का-बक्का हो, दोनों हाथों को मुंह के आगे करके कांपने लगा और अपने बचने का उपाय सोच ही रहा था कि दुर्गा रूपी सुंदरी ने सधे हाथों से ऐसा

वार किया कि खान के कंधे से लेकर कमर तक, जनेऊ की तरह कटता चला गया। उस दुष्ट कृतघ्न की लोथ धरती पर पड़ी तड़प रही थी। उस वीर नारी ने तलवार फेंक दी और पेड़ से बंधे खान के घोड़े को खोलकर, उस पर सवार होकर नदी के ऊपर की ओर तेजी से भाग निकली। फकीर भी अपने टट्टू पर चढ़कर उसके पीछे हो लिया और पुकारने लगा–सुंदरी...सुंदरी...ठहर जा...मैं तुम्हारी खोज में ही आया था। पर जैसे दूध का जला लस्सी को भी फूंकता है, सुंदरी ने उसकी ओर ध्यान न दिया और कुछ ही पलों में आंखों से ओझल हो गयी।

फकीर ने भी कुछ दूर जाकर अपना वेश बदल लिया। वह तो बिजला सिंह था जो सुंदरी की खोज में निकला था। वह पत्तन के नाके की ओर पहुंचा जहां से खालसा सेना नदी पार कर चुकी थी। बलवंत सिंह तथा साथियों को बिजला सिंह ने सुंदरी का समाचार दिया। उसी समय बलवंत सिंह अपने साथ दस और सिंहों को लेकर सुंदरी की खोज में निकल पड़ा।

(12)

लाहौर के मुगल सूबेदार का दीवान लखपतराय सिखों के पीछे हाथ धोकर पड़ा था। सिखों को मारना जैसे वह अपनी मुक्ति का रास्ता समझता था। उसने सिखों का बीज–नाश करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। मुसलमान हाकिम पहले ही सिखों को मिटाने पर तुले हुए थे। गांव–गांव में चौधरियों को यह आज्ञा मिली हुई थी कि जहां कहीं भी कोई सिख मिले उसे मरवा दो और उसका घर–बार, जमीन–जायदाद जब्त कर लो। सिखों को मारने के लिए सभी इलाकों में मुगलों की गुपती फौज घूमती रहती थी। इन सभी अत्याचारों को सिखों ने बड़ी वीरता से सहा। मुखबिरों का बाजार काफी गर्म था। सिखों को पकड़वाने वालों को बड़े इनाम दिये जाते थे। बहुत से सिख शहरों और गांवों को छोड़कर जंगलों और पहाड़ों में जा बसे थे। सिखों के जत्थे यदि गश्ती फौज की पकड़ में आ जाते तो उन्हें बंदी बनाकर लाहौर लाया जाता

और यातना दे देकर मारा जाता। लाहौर में सिखों के सिरों से कुएं भर गये और बुर्ज बनाये गये।

जब सुंदरी घोड़े पर चढ़कर भाग निकली तो पत्तण से आगे कितनी दूरी तक उसे खालसे का दल कहीं दिखाई न दिया। उसे रास्तों का सही ज्ञान नहीं था। अब कदम–कदम पर उसे यह संशय हो रहा था कि कहीं पीछे से दुश्मन न आ जाएं। वह घोड़े पर सवार बार–बार पीछे मुड़कर देखती थी। उसे इस बात का दुःख था कि इस समय उसके पास कोई शस्त्र नहीं था। अपनी कटार वह उस सिपाही के पेट में ही लगी छोड़ आयी थी जिसे उसने पहाड़ी पर मारा था। और उस कृतघ्न अमीर को मारकर वह उसकी तलवार भी वहीं फेंक आयी थी। परन्तु उसने सोचा कि गुरू गाबिंद सिंह जी ने इतने कष्टों में उसकी सहायता की है वही इस समय भी उसके सहायक हैं। भूख और यात्रा की थकावट से वह मरी हुई थी, कैद के कष्टों से वह बिंधी हुई थी, अपने भाइयों से बिछड़ जाने से वह घबराई हुई थी। वह इस उजाड़ बियाबान में अकेली भटक रही थी।

कुछ दूर जाने पर उसे स्वच्छ जल की एक झील दिखायी दी, जिसके किनारे पर रंग बिरंगे पंछी किलोलें कर रहे थे। उसने घोड़े से उतरकर उसे एक पेड़ के साथ बांध दिया। कुछ सुस्ताकर उसने स्नान किया पानी पीया, जपुजी साहिब का पाठ किया और प्रार्थना करने में इतनी मग्न हो गयी जैसे वह पत्थर की मूर्ति हो। मुरगाबी सारस तथा अन्य अनेक प्रकार के पंछी उसके चारों ओर निर्भय होकर घूमने फिरने लगे। ध्यान मग्न सुंदरी ने यहां चार–पांच घड़ियों का समय बिताया। फिर एका एक बंदूक की गोली की आवाज से उसका ध्यान टूटा। उसने देखा कि झील के दूसरे किनारे पर दस–बीस घुड़सवार शिकार खेल रहे हैं। उनकी गोली सुंदरी के पास से सरररर करती हुई निकल गयी और सुरखाब को जाकर लग गयी। यह देखकर सुंदरी घबराकर उठी, जल्दी से घोड़े पर चढ़ी और दूर से यह ताड़ने लगी कि ये कौन हैं।

उसने पहचाना ये तो वही तुर्क हैं, और उनमें वह हाकिम भी है जिसने सुंदरी को विपत्तियों में घेर दिया था। वह कांप उठी, फिर उसने कुछ सोचा और दिल मजबूत करके घोड़े को एड़ लगाकर भाग निकली।

शिकारी हैरान हो रहे थे कि मुरगाबियों के झुंड में से यह राजहंसिनी कौन निकल आयी। आश्चर्य से भरे और गोली से मरे पंछी को ढूंढ़ने के विचार से वे घोड़ों को सरपट दौड़ाते हुए झील के इस किनारे पर आ गये। उन्होंने सुंदरी को भागते देखा तो अपने आश्चर्य को दूर करने के लिए उन्होंने अपने घोड़ों को उसके पीछे छोड़ दिया, और कुछ दूर जाकर उसे घेर लिया। हाकिम ने सुंदरी को पहचाना और बोला, "शुक्र है खुदाबंद कमीन का जिसने इस तरह मेल करवा दिया शुक्र...है लाख लाख...शुक्र है।" यह कहते-कहते वह घोड़ों पर ही बेहोश जैसा हो गया। उसके सभी साथी अचंभित खड़े थे। सुंदरी चारों ओर से घिरी हुई व्याकुल मन से अपनी नयी आपदा को देख रही थी।

हाकिम ने आंखें खोलीं और बोला-"तुम्हारा जन्म किन काफिरों के घर हुआ...आह तुम कितनी बहादुर हो...घोड़े पर कितनी शान से घूमती-फिरती हो...बेशक तुम मेरी बेगम बनने लायक हो। पर पता नहीं तुम मुझसे डरती क्यों हो? सुंदर तो मैं भी हूं। शायद तुम इसीलिए भागती हो कि तुम्हारा मन इसी तरह आज़ाद होकर घूमना चाहता है. ..हिरनों की तरह बनों में चौकड़ी भरना चाहता है...पर मेरे महल में परदों की कैद है। हां ठीक है...तुमने ठीक बूझा है तुम घबराओ मत। मैं भी तुम्हें आज़ाद रखूंगा। कसम नबी रसूल की, मैं तुम्हें दिल से प्यार करता हूं। मैं शायर हूं..गंवार नहीं। चलो अब तुम्हें शहर ले चलें।" यह कहकर वह हंस दिया।

सुंदरी इस समय उसकी बातें नहीं सुन रही थी। वह आंखें बंद किये प्रार्थना कर रहीं थी कि हे अकाल पुरूष इस समय मेरे धर्म की रक्षा करो...आपकी कृपा के बिना और कोई आसरा नहीं है। प्रार्थना में अपनी एकाग्रता के मध्य ही उसे ऐसा लगा जैसे उसका भाई बलवंत सिंह

अपने साथियों सहित उधर ही आ रहा है। वह जोर से चीख उठी... प्यारे वीर...प्यारे वीर...जल्दी पहुंचो...इधर पहुंचो। उसकी यह चीख इतनी तेज आवाज में निकली कि घोड़े तक चौंक उठे। सुंदरी की तलाश करते बलवंत सिंह और उसके साथियों ने भी यह चीख सुनी और वे अपने घोड़ों को दौड़ाते हुए उधर आ निकले मुगल सिपाहियों और सिखों में एक छोटी सी लड़ाई हुई। दो मुगल मारे गये, शेष अपनी जान बचाकर भाग निकले।

भाई-बहन घोड़ों से उतर कर ऐसे मिले कि दोनों की आंखों से आंसुओं की धार बह निकली।

(13)

देश की आज़ादी के लिए अपनी जान की बाजी लगाने वाले सिखों को उन दिनों अनेक तरह के कष्ट सहने पड़ रहे थे। मुगल सेनाएं इनके पीछे लगी हुई थी और सिखों के जत्थे उनसे निरन्तर लड़ते हुए घने जंगलों पहाड़ों और मरूस्थलों में विचरते रहते थे। ऐसी ही एक लड़ाई में बिजला सिंह की पिंडली में गोली लग गयी। सुंदरी और धर्म कौर ने उसके घाव पर पट्टी बांधी और उन्हें किसी तरह घोड़े पर बैठाया। फिर सभी अपने ठिकाने की ओर चल दिये। सुंदरी का घोड़ा आज चोट खा जाने के कारण तेज नहीं चल पा रहा था, इसलिए वह अन्य साथियों से कुछ पीछे रह गयी। इतने में उसकी नज़र एक गडढे पर पड़ी जहां घावों से लहू-लुहान एक पठान पड़ा तड़फड़ा रहा था। उसके मुंह से पानी...पानी...खुदा के लिए पानी...की आवाज निकल रही थी। उसकी यह दशा देखकर सुंदरी को दया आ गयी। वह अपने घोड़े से उतरी और अपनी जिस्ती सुराही से उसने दो घूंट पानी उसके मूंह में डाला। पानी क्या था, अमृत था। पठान में जैसे जान पड़ गयी। वह आंखें खोलकर बोला-"ऐ बन्दे, तुम्हें हजार हजार शुक्रिया। सुंदरी ने देखा उसके घुटने और जांघ के पास तलवार के घाव हैं। उस की छाती के नीचे भी एक घाव था। उसने पठान की पगड़ी फाड़ी और उसका

खून साफ करके घाव बांधने लगी। पठान यह देखकर बहुत शुक्रगुजार था। खुश होकर उसने पूछा–"तुम कौन हो? मुसलमान हो ना? तुम काफिर तो नहीं हो सकती उनमें इतनी नेकी कहां।"

उस समय सुंदरी का ध्यान अपने जत्थे की ओर था, जिससे वह बहुत पीछे रह गयी थी। उसके मुंह से अचानक निकल गया–"सिंहनी।"

उसकी बात सुनकर पठान को जोश चढ़ गया। उसने अपने पास पड़ी तलवार उठाई और उसका एक भरपूर वार सुंदरी पर कर दिया। वह स्वंय भी फिर इस तरह गिरा कि उठा नहीं। सुंदरी तलवार का वार खाकर घायल होकर गिर पड़ी। उसके शरीर से ख़ून की धार बहने लगी और वह बेहोश हो गयी।

उसी समय वह हाकिम अपने कुछ सैनिकों सहित उधर से निकला। वहां एक घोड़ा खड़ा देखकर उसके मन में आया शायद उसका कोई सिपाही यहां पड़ा हो। वह पास आया तो देखा कि पठान तो मर चुका है और पास ही घायल सुंदरी बेहोश पड़ी है। उसने अपने साथियों की मदद से सुंदरी के जख्मों को धोया और उनपर पट्टी बांध दी। आस पास कहीं डोले का प्रबन्ध तो हो नहीं सकता था। एक सैनिक ने किसी तरह सुंदरी को अपने घोड़े पर डाला और पास के गांव में ले आए। गांव के पंडित वैद्य जी को पकड़ मंगवाया गया और उनसे इलाज करने को कहा गया। पंडित जी ने सुंदरी का इलाज किया और ताकत की कुछ दवाएं मुंह में डाली।

बीमार सुंदरी को हाकिम के महल में लाया गया। वहां बड़े बड़े हाकिम उसके इलाज के लिए बुलाए गये। उसकी देख–भाल के लिए हिन्दू गोलियों और नौकरों को रखा गया। सुंदरी बेहोश थी। कभी–कभी वह आंखें खोलकर इधर–उधर देखती पर कुछ बोल न पाती। हकीमों ने उसके घाव खोलकर देखे और फिर बड़े यत्न से उन्हें साफ करके उन्हें रेशमी धागे से सी दिया और उनपर दवाई लगा दी। उसे खाने के लिए ताकत की दवाएं दी जाने लगीं।

सुंदरी की हालत धीरे-धीरे सुधरने लगी। लगभग एक महीने बाद वह बस इतना बोली कि मैं कहां हूं? मेरे वीर कहां हैं? धर्म कौर कहां है? उसे बताया गया कि यह शहर सिखों ने जीत लिया है, तुम राजमहल में हो और तुम्हारे भाई नयी मुहिम पर लाहौर गये हैं। यह सुनकर वह चुप हो गयी। हाकिम उसे देखने के लिए नित्य आता था, पर केवल उस समय जब वह सो रही होती। वह जानता था कि यदि सुंदरी को यह पता लग गया कि वह उसके महल में है तो वह चिंता से मर जाएगी।

कई महीनों के उपचार के बाद सुंदरी ठीक हो गयी। उसके घाव भर गये, शरीर में ताकत आ गयी। और चेहरा भी खिल गया, परन्तु उसे कभी-कभी बुख़ार हो जाता था। धीरे-धीरे सुंदरी को अपनी वास्तविक दशा का पता लग गया। हाकिम दूसरे-चौथे दिन उसे देखने आता था। और उसे अपनी राम कहानी सुनाता था। उस दिन सुंदरी को फिर बुखार हो जाता। वह दो-चार दिन में कुछ ठीक होती कि हाकिम उसे दिखाई दे जाता उसे देखते ही सुंदरी की हालत बिगड़ जाती। हकीम उसे रोकते, परन्तु हाकिम उन्हें दोष देता कि वे सुंदरी का ठीक इलाज नहीं कर रहे हैं।

इधर सारे पंजाब में सिखों पर अत्याचार की नयी आंधी चल पड़ी थी। लाहौर का सूबेदार मीर मन्नू ने सिखों को मिटाने का बीड़ा उठा लिया था। सारे पंजाब में गशती फौज छोड़ी गयी, स्थान-स्थान पर सिखों को मारने के लिए चौकियां और कच्चे किले बनाए गये। गांव से पंचों की जमानतें की गयीं कि वे अपने क्षेत्र में सिखों को न बसने दें। किसान और व्यापारी सिख भी शहीद किये जाने लगे। लाहौर की घोड़ मंडी में सिखों के सिर उतरने शुरू हो गये। सारे पंजाब में सिखों के लिए जैसे प्रलय आ गयी।

ऐसी स्थिति में सुंदरी की खोज करना बहुत कठिन काम हो गया। बिजला सिंह और बिनोद सिंह जैसे गुप्तचरों ने जगह जगह जाकर सुंदरी की खोज की। बहुत प्रयत्न के बाद उन्हें इतना पता लगा कि सुंदरी

बीमारी की हालत में हाकिम की कैद में है और इसका इलाज हो रहा है। परन्तु यह किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि उसे वहां से कैसे मुक्त कराया जाए।

सुंदरी के घाव तो भर गये थे, पर वह अपने असली रंग–रूप में न आ सकी। बुखार उस बिचारी का पीछा नहीं छोड़ रहा था। ऊपर से भाइयों का विछोह, धर्म नष्ट होने का भय, शत्रुओं की कैद आदि अनेक बातें थी जिनकी चुभन से अंदर का दुःख घट नहीं रहा था। गुरू नानक जी की ये पंक्तियां उसे याद आती रहती–

दुख वेछोड़ा एकु दुखु भूख।। इकु दुखु सकतवार जमदूत।।
इकु दुखु रोगु लगै तनि धाइ।। वैद न भोले दारु लाहि।।
(मलार म॰ 1)

एक दिन सुंदरी का उपचार करने वाले हकीमों–वैद्यों ने बताया कि यदि सुंदरी के साथ कोई हंसमुख दासी रहे तो शायद इसका मन लग जाए और बुखार भी कम हो जाए तो इस सुझाव पर दासियों की खोज शुरू हुई। एक दो आई परन्तु वे सुंदरी को न भाई। अंत में सुंदरी की सेवा के लिए राधा नाम की एक सुन्दर और चतुर दासी रखी गयी। इस दासी को गुरूवाणी कंठस्थ थी। सुंदरी अपने हृदय से परमात्मा के नाम को कभी नहीं भूलती थी और सदा उसका नाम स्मरण जपती रहती थी। यह दासी उसे पाठ सुनाती थी जिससे सुंदरी को बहुत आनन्द मिलता था। रात्रि के अंतिम पहर से लेकर दिन चढ़े तक वह गुरूवाणी का पाठ करती रहती। इससे सुंदरी का मन बहल जाता। परन्तु पापी बुखार अभी भी उसका पीछा नहीं छोड़ रहा था। हकीमों ने कहा कि इसे तपेदिक का बुखार है। कईयों ने कहा कि इसे मौसमी बुखार है जो आज–कल शहरों में फैल रहा है। परन्तु किसी हकीम या वैद्य की दवा ने सुंदरी को पूरा लाभ न पहुंचाया।

एक दिन हाकिम ने दासी को अलग बुलाकर पूछा "तुम मुझे असली बात बताओ कि सुंदरी के मन में क्या है जिसे मैं पूरा करूं। यह तो मैं जानता हूं कि वह पक्की सिख है और अपने धर्म को छोड़ेगी नहीं। पर यदि मेरे सिख बन जाने से उसकी बीमारी दूर होती है तो मैं गुप्तरूप से सिख बन जाता हूं।"

दासी ने कहा– "जी मैं किसी समय इस भेद का पता लगाऊंगी। पर अभी तो मुझे यही लगता है कि इनका रोग अंदर से गया नहीं है। मेरी बेअदबी माफ करें, यदि आप मानें तो मैं एक बात कहूं।"

हाकिम ने कहा– "कहो डरो मत।"

दासी बोली– "आप ने बड़े बड़े हकीमों से इलाज करवाया है, जिनसे अभी तक कुछ नहीं बना। छोटे हकीमों के पास आप जाते नहीं हैं कभी कभी उनके पास बहुत अच्छे टोटके होते हैं। मैंने इससे कहीं अधिक समय से बीमार मरीजों को अच्छा होते देखा है। एक हकीम है जिसे लोग वाड़रियां वाला कहते हैं। वह नत्थू के टिब्बी कौल बाग में रहता है। सारे शहर के लोग बुखार का इलाज कराने के लिए उसके पास जाते हैं। वह सिर्फ एक पुड़िया देता है उसे खा लेने पर बुखार उतर जाता है। आप उससे इलाज करवाइए।"

हाकिम ने उत्तर दिया– "अच्छी बात है"

पता लगाने पर हाकिम को पता लगा कि वाडरियां वाला हकीम ताप से पीड़ित लोगों का शर्तिया इलाज कर रहा है। हाकिम ने उस हकीम को अपने महल में बुलवाया। हकीम साहब ने सुंदरी की नाड़ी देखी और कहा, "नवाब साहब इसे भी मुतफ़करा है अर्थात चिंता का ताप है।"

फिर उन्होंने सुंदरी के पैर की नाड़ि देखी, उसके थूक की जांच की और बोले, "इसका बुखार नाड़ियों में धंस गया है। इसे मैं ठीक कर दूंगा, पर शहर की हवा गंदी है। इसे किसी खुले मैदान में, पानी के किनारे ले चलिए। वहां यह ठीक हो जाएगी।"

हाकिम बोला, ''आप जहां कहिए, इसे ले चलते हैं।''

हकीम साहब बोले, ''यदि समुद्र का किनारा हो तो बहुत अच्छा है, नहीं तो किसी झील के किनारे ही सही। यदि यह भी मुमकिन न हो तो व्यास नदी के किनार ही ले चलिए।''

यह कहकर हकीम साहब ने कुछ मोती और कुछ संगय शब जलाया, कुछ चंदन रगड़ा, कुछ दवाइयां अपने पास से मिलाईं। दवा बनाकर वे उसकी तीन पुड़ियां दे गये। उस दिन सुंदरी को बुखार नहीं चढ़ा। हकीम साहब की इज़्ज़त बन गयी।

उसी दिन तम्बू-कनात, दूसरा साजोसामान, कुछ सवार, हाकिम स्वयं, सुंदरी और दासियां व्यास नदी के किनारे पहुंचे और अपना डेरा लगा दिया। तीन दिन में ही वहां की शुद्ध हवा के प्रभाव से सुंदरी की काया पलटने लगी।

हकीम साहब बोले, ''यदि आप किसी झील के किनारे डेरा लगाएं तो बहुत लाभ होगा।''

बहुत सोच-विचार के बाद काहनूंवाण की झील पसंद की गयी। सारा साजोसामान उस झील के किनारे लगा दिया गया। यहां सुंदरी का स्वास्थ्य बड़ी गति से सुधरने लगा। सुंदरी सचमुच सुंदरी बनने लगी।

एक दिन हाकिम सुंदरी को आनन्दचित्त बैठा देखकर उसके पास आ बैठा और मीठी-मीठी बातें करने लगा। सुंदरी एक गंभीर न्यायकर्त्री की भांति उसकी बातें सुनती रही। फिर बोली, ''नवाब साहब, मैं लोगों की भांति कृतघ्न नहीं हूं। आपने चाहे मुझे कैद में डालकर मेरा इलाज किया है, पर मैं इस बात का अहसान मानती हूं। आप मुझसे विवाह करने का इरादा रखते हैं। यह बात ठीक नहीं है। मैं आपकी बेटी की तरह हूं। आप हाकिम हैं। आपको अपनी प्रजा पर दया-दृष्टि रखनी चाहिए।''

हाकिम ने उसकी बहुत मिन्नत-खुशामद की। कुछ भय भी दिखाया। सुंदरी ने कहा, ''आपने मुझ पर बड़ी कृपा की है, थोड़ी-सी और करें। आप तीन दिन और ठहरिए। इस बीच में सोचकर आपको उतर दूंगी।''

हाकिम ने सुंदरी की बात मान ली।

दूसरे दिन दोपहर के समय हाकिम साहब बैठे शतरंज खेल रहे थे। एक घबराया हुआ सा नौकर आया बोला, "हजूर, उन पेड़ों के पीछे से धूल उड़ती दिखाई दे रही है, शायद कोई सेना आ रही है।"

हाकिम साहब बोले, "आंधी होगी।"

कुछ देर बाद फिर खबर आयी, "हजूर, अब तो घुड़सवार साफ दिखाई दे रहे हैं।"

हाकिम साहब झटपट उठे। एक नौकर ने पहचाना, "अरे ये तो सिख लगते हैं।"

उसकी यह बात सुनकर हाकिम के घुड़सवार तैयार होने लगे। हाकिम साहब की सिट्टी-पिट्टी मारी गयी। उनके तैयार होने से पहले ही लगभग सौ सिख घुड़सवार वहां आ पहुंचे। उनमें से तीस सवारों ने उस टीले को घेर लिया जहां सुंदरी का तम्बू लगा हुआ था। शेष तुर्क सैनिकों से गुत्थम-गुत्था हो गये। सिख जत्थे के नेता बलवंत सिंह ने ललकारा, "आप लोग दो सौ से ज्यादा हैं और हम सौ हैं आओ, एक लड़ाई तो कर लो।"

उसकी बात सुनकर सभी तुर्क सैनिकों का ध्यान उधर चला गया। इधर सुंदरी अपने तम्बू में से निकली और अपने भाइयों को देखकर कमल की तरह खिल गयी। राधा दासी बनी हुई धर्म कौर और बाडरिया हकीम बने बिजला सिंह ने सारा प्रबन्ध कर रखा था। उन्होंने एक घोड़े पर सुंदरी को सवार कर दिया। बिजला सिंह एक तुर्क सिपाही का घोड़ा खोल कर लाया। उस पर धर्म कौर बैठ गयी। बिजला सिंह अपने घोड़े पर सवार हो गया और ये तीनों वहां से निकल पड़े। सिखों का जत्था तुर्क सैनिकों से जूझ रहा था।

हाकिम सिखों के हथकंडों को अच्छी तरह जानता था। वह अनेक बार इनसे लड़ चुका था। वह इस बात को पहले ही ताड़ गया था, वह पचास सवार लेकर सुंदरी के तम्बू पर नज़र गड़ाए था। इधर सुंदरी का

तम्बू हिला, उधर वह अपने साथियों को लेकर आगे बढ़ा। यहां दोनों तरफ से बड़े जोर की तलवर चली। हाकिम बार–बार आक्रमण करता था पर सिखों की लौह–दृढ़ता के सामने उसकी चल नहीं पा रही थी।

बलवंत सिंह ने देखा कि बाजी पलट रही है। उसने जल्दी से अपनी सेना को इशारा किया और घमासान युद्ध में से निकलकर उत्तर की ओर, बिजली की फुर्ती से अपने घोड़े का रूख मोड़ दिया। सुंदरी, धर्म कौर और बिजला सिंह उधर बढ़ रहे थे और हाकिम की सेना उनके पीछे लगी हुई थी। दोनों पक्षों में फिर घमासान लड़ाई होने लगी। बलवंत सिंह को लगा यह बाजी हाथ से निकल जाएगी। हारेंगे तो नहीं, परन्तु सुंदरी नहीं बचेगी। यह सोचकर बलवंत सिंह जोर से 'गुत्था' कहकर चिल्लाया। उसके आदेश पर सिख लड़ते, मरते, मारते, घुमावदाव व्यूह रचना में तीलियों की तरह इकट्ठे होते हुए पिंडाकार की भांति हो गये। अब एक कतार आगे होकर लड़ती और पिछली कतारें आगे बढ़ती जातीं। इतने में बलवंत सिंह से आदेश निकला, 'हरन...।' इस आदेश पर सिखों के घोड़े हवा की गति से भागे। इस भाग–दौड़ में हाकिम के पास से ही बिजला सिंह और सुंदरी भी निकले। हाकिम ने तलवार का भरपूर वार किया। बिजला सिंह का घोड़ा तो निकल गया, पर उसकी तलवार सुंदरी को पेट पर घाव करती हुई जांघ पर लगी। इस चोट से उसका घोड़ा बहुत तेज भागा और सुंदरी तुर्क सैनिकों के घेरे से निकलकर अपने भाइयों के बीच में पहुंच गयी। वह पीड़ा से व्याकुल थी पर वह बड़े हठ से एक हाथ पेट पर रखे, एक हाथ से लगाम संभाले घोड़ा बढ़ाए चली जा रही थीं लहू की धार पर बलवंत सिंह की नजर पड़ी। उछलकर अपने घोड़े से सुंदरी के घोड़े पर पहुंच गया और उसे संभालकर घोड़े को दौड़ाता हुआ अपने साथियों सहित वन में जा घुसा।

वन में इनकी प्रतीक्षा हो रही थी। जब ये लोग वहां पहुंचे तो सभी को बड़ी प्रसन्नता हुई, पर सुंदरी के घाव देखकर सभी चिंतित हो उठे।

सरदार शाम सिंह ने एक अच्छी छायादार जगह पर घास के बिस्तर पर सुंदरी को लिटाया। उसके घावों पर तेल चुपड़कर पटी बांधी। जांघ का घाव तो संभल गया, पर पेट के घाव का खून बंद नहीं हो रहा था। सुंदरी होश में तो थी, पर पीड़ा के कारण अत्यन्त दुर्बल हो रही थी। उस समय कुछ सिंह एक गांव में गये और एक सयाने जर्राह को पकड़ लाए। जर्राह ने सुंदरी का पेट का घाव सी दिया और अच्छी तरह पटी बांधा दी। सुंदरी को यद्यपि बहुत कष्ट हो रहा था, पर अपनी मुक्ति की उसे बहुत प्रसन्नता थी।

सुंदरी को रात में बुखार चढ़ गया। दिन में वह कुछ ठीक हो गयी, परन्तु बहुत शिथिल थी। सयाना हकीम पास न होने के कारण सुंदरी के घावों पर पूरा ध्यान न दिया जा सका। उसके घावों में विष फैल गया। दिन-रात अपनी शक्ति घटती देखकर सुंदरी को आभास हुआ कि अब उसका अंत समय पास आ गया है। उसकी यह दशा देखकर सभी लोगों के दिल कांपने लगे। ऐसी निराशाजनक स्थिति में बिजला सिंह किसी तरह उस हकीम को पकड़ लाए जिन्होंने हाकिम के महल में सुंदरी के धाव सिये थे। हकीम ने अपनी तरफ से पूरी कोशिश की। सुंदरी का चेहरा इतने दु:ख में भी प्रसन्न था। वह हर समय खिली हुई दिखाई देती थी। उसे पीड़ा होती, पर उसके मुंह से हाय न निकलती। उसे बुखार चढ़ जाता, पर वह व्याकुल न होती। उसके चेहरे पर सदैव अपने महान् गुरूओं के चरणों की प्रीति विद्यमान रहती। उसे इस बात का पूर्ण निश्चय था कि मैं गुरू की हूं, गुरू मेरे अंग-संग है।

सुंदरी की शिथिलता प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। उसके सभी हितैषियों का मन भी अब निराशा से भरता जा रहा था। एक दिन बलवंत सिंह ने पूछा, "बहन, यदि तुम्हारी कोई इच्छा हो तो बताओ?"

सुंदरी बोली, "मेरे वीर, मैं तुझ पर वारी जाऊं। मेरे मन में कोई इच्छा शेष नहीं रही, क्योंकि यह मन कभी सांसारिक रसों में नहीं पड़ा, न ही इसमें कभी तृष्णा जागी। जब मुझसे तृष्णा ही दूर रही तो इच्छा

कहां। इच्छा रहे भी किसकी? गुरू-कृपा से मैं गृहस्थ के चक्कर से बची रही। धन की ओर से मेरा मन सदा उपराम रहा है। गुरू के बिना और मेरे मन में कोई मोह नहीं। वह आनंद प्रदाता मेरे अन्दर बैठा है। मेरा मन उसके चरणों की धूल में इतना मस्त है कि उस रस को छोड़ता ही नहीं। इसलिए मेरे भाई, जब अपनी इच्छा अपनी पकड़ में हो तो मन किधर जाए और कैसी वासना उत्पन्न हो?

मन असवार पवन का घोड़ा, असां गगन तमाशे जाणा।
गगन अंदर इक बाग अजाइब चुण अमृत फल खाणा।।
मिठा बोलण ते नाम अराधण, सीतल पवन फुहारा।
मन दीआं वागा हत्थ बिहारी तिन्हां कौन मिले असवारा।।
(सर्बलोह)

हां वीर जी, एक विचार कभी-कभी उभरता है : गुरू ग्रंथ साहब का प्रकाश हो और मैं एकाग्रचित होकर सारा पाठ सुनूं और इस निर्बल देह से जी भरकर मत्था टेकूं। पर यह बात कठिन दिखाई देती है। इसलिए यह विचार भी मैंने त्याग दियाहै।''

बलवंत सिंह ने कहा, ''बहन, तुम चिंता न करो। यह बात कठिन नहीं है। इसका प्रबन्ध शीघ्र ही हो ज़ाएगा।''

सुंदरी की आंखों में आंसू भर गये। वह बोली, ''वीरजी मैं बड़ी अभागिनी हूं। मेरे कारण आपको और सभी सिंहों को बड़े-बड़े कष्ट उठाने पड़े। मेरी इच्छा यह थी कि मैं भाइयों को सुख देती। उसके विपरीत मैं सदा उनके लिए दु:ख का कारण बनती चली गयी। मैं गुरू गोबिंद सिंह जी के सम्मुख क्या मुंह दिखाऊंगी। अमृतपान करके भी मैंने पंथ की कितनी सेवा की है।''

सुंदरी की ये बातें सुनकर सभी की आंखें भर आयीं। सरदार शाम सिंह ने बड़े स्नेह से कहा, ''बेटी, तुम स्त्री नहीं देवी हो। तुम्हारे जैसी धर्मप्राण स्त्रियों के कारण ही यह पंथ बचा हुआ है। तुमने जिस तरह

अमृत को सार्थक किया है, ऐसा सभी स्त्री–पुरूष करें। तुम अपने पिता के पास बहुत मुक्त होकर जा रही हो। तुम धन्य हो, तुम्हारा जन्म धन्य है। पंथ में तुम्हारी सेवा का सम्मान है और सभी तुम्हारी प्रसन्नता के लिए अरदास करते हैं।''

सुंदरी बोली, ''पिताजी, जो मुझे करना चाहिए था, वह मैं नहीं कर सकी।''

यह कहकर वह रो पड़ी और बेहोश हो गयी। बलवंत सिंह ने पानी के छींटे डालकर उसे होश में लाया। कुछ सिंह गुरू ग्रंथ साहिब की सवारी लेने चले गये।

प्रातः होते–होते गुरू ग्रंथ साहिब की बीड़ आ गयी। दस–बारह सिंहों ने केशी स्नान किया, गुरू ग्रंथ साहिब का प्रकाश करके अखण्ड पाठ प्रारम्भ कर दिया। सुंदरी पास में लेटी हुई पाठ सुनती रहती। वह कुछ समय आसरा लेकर बैठती, थक जाने पर लेट जाती। फिर भी उसका मन न मरता। उसकी दशा ऐसी हो रही थी जैसे वर्षा होने पर सूखी धरती की हो जाती है। सोलह पहर के बाद अखण्ड पाठ पूर्ण हुआ। फिर दीवान लगा। सभी ने मिलकर कीर्तन किया और गुरूवाणी के शब्दों का गायन किया, भोग डाला, आनन्द साहब का पाठ किया, आरती पढ़ी, प्रसाद बांटा। सुंदरी ने भी प्रसाद ग्रहण किया। वह बोली, ''मेरे वीरो और मेरी बहन, तुम्हारी यह मेहमान बहन तुमसे एक विनती करती है। विछोह दुःखदायी होता है, पर मैं इसीलिए दुःखी नहीं हूं क्योंकि हमारा आत्मा का मेल कभी नहीं टूटेगा। हम सभी बैकुंठी जीव हैं और बैकुंठ भी साधु–संगत का है। मैं यह कहे बिना भी नहीं रह सकती कि उस हाकिम की मैं ऋणि हूं। मेरी बिमारी पर उसने रूपया खर्च किया है। आप कुछ रूपया उसे भिजवा दीजिएगा, जिससे मैं उससे उदऋण हो जाऊं।''

सुंदरी धीरे–धीरे बोलती रही, ''प्यारे वीरो, गुरू तुम्हारा रक्षक है। आपको अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ेगा, संग्राम होंगे, पर

आप सभी से निकलते हुए राज करेंगे। मेरी प्रार्थना है कि आप अपनी स्त्रियों को अपना साथी समझें, उन्हें नीच न बनाएं। जब आप उन्हें नीच समझेंगे, उन पर निर्दयी होकर कठोरता बरतेंगे और जब परस्त्रियों को बुरी नजर से देखेंगे तब आपका तेज–प्रताप गिर जाएगा। गुरू ग्रंथ साहब में नारी को पूरा सम्मान और अधिकार दिया गया है। दसवें गुरू ने स्त्रियों को भी अमृत बख्शा था। माता साहब ने अपने पवित्र हाथों से उस अमृत में बताशे डाले थे। आप ने भी अपनी जान की परवाह न करते हुए हमारी रक्षा की है।

और हे बहन धर्म कौर, तुम भी जब तक शुद्ध सिंहनी हो, पंथ तगड़ा रहेगा। जब पति सिंह हो और आप कुछ और हों, तो आपकी गति बिगड़ जाएगी।

मेरे भाई, मेरी बिनती न भूलना, स्त्री का सत्कार करना। जब आप लोग राजा बन जाएं, बड़े सरदार बन जाएं, किसी सिख को छोटा न समझना। हमारे मध्य धन प्रधान नहीं, कर्म प्रधान है। अच्छा...थोड़ा जल दीजिए, मैं मुंह–हाथ धो लूं।''

इस समय सुंदरी का चेहरा चांद की तरह चमक रहा था। सूर्य की किरणों की तरह का तेज उसके रूप के चारों ओर भास रहा था।

जल आया। सुंदरी ने मुंह–हाथ धोया। धर्म कौर के सहारे बैठकर बड़े प्रेम से जपुजी का पाठ किया और भोग डालकर अरदास की। फिर दोनों हाथ जोड़कर श्री गुरू ग्रन्थ साहिब के सम्मुख मत्था टेकते हुए पंक्तियां पढ़ीं :

मेलि लैहु दइआल ढहि पए दुआरिआ।।
रखि लेवहु दीन दइआल भ्रमत बहु हारिआ।।
भगति वछलु तेरा बिरदु हरि पतित उधारिआ।।
तुझ बिनु नाही कोइ बिनउु मोहि सारिआ।।
करु गहि लेहु दइआल सागर संसारिआ।।
(जैतसरी वार म॰ 5)

सुंदरी का मस्तक पृथ्वी से न उठा। कितना समय बीत गया। जब बलवन्त सिंह ने घबराकर उसका सिर उठाया तो देखा–सुंदरी चली गयी, वह अपने पिता के पास चली गयी। हां...सतवंती का खाली पिंजड़ा पड़ा था।

सभी 'शब्द' गाते, भजन करते हुए सुंदरी का अंतिम संस्कार किया।

सुंदरी के देहावसान का दुःख सारे पंथ को हुआ। धर्म कौर अपनी प्रिय बहन का वियोग न सह सकी और ग्यारह दिन बाद वह भी स्वर्ग सिधार गयी। बलवंत सिंह वैराग में डूबकर एकान्त में भजन करना चाहता था, पर सिंहों ने उसे न जाने दिया। इस प्रकार के समाचार मिल रहे थे कि अहमद शाह दुर्रानी आक्रमण करने के लिए बड़ी सेना लेकर काबुल से चल पड़ा था। इसलिए बलवंत सिंह 'करम करत होवै निह करम' के हुक्म अनुसार पंथ की सेवा में तत्पर रहा।

.,.....0......